जनवरी - दिसंबर 2010 वर्ष: 8 अंक: 1-4

विश्व हिन्दी न्यास की त्रैमासिक विज्ञान पत्रिका

विज्ञान प्रकाश

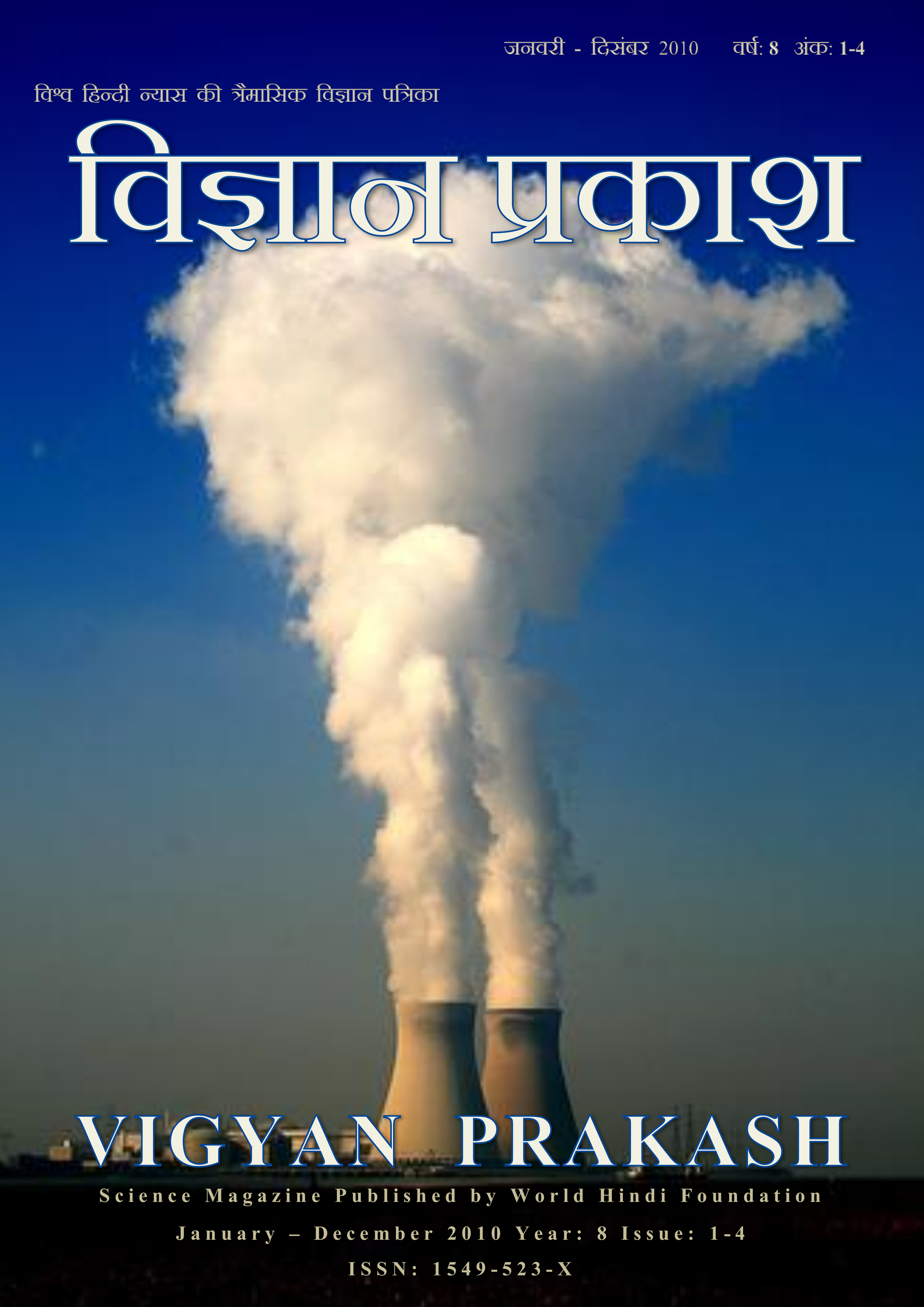

VIGYAN PRAKASH

Science Magazine Published by World Hindi Foundation

January – December 2010 Year: 8 Issue: 1-4

ISSN: 1549-523-X

"I know quite clearly what I want out of my life. Life and my emotions are the only things I am conscious of. I love the consciousness of life and I want as much of it as I can get. But the span of one's life is limited. What comes after death no one knows. Nor do I care. Since, therefore, I cannot increase the content of life by increasing its duration, I will increase it by increasing its intensity. Art, music, poetry and everything else that consciousness I do have this one purpose - increasing the intensity of my consciousness of life".

- H.J. Bhabha

होमी जहांगीर भाभा (30 अक्टूबर, 1909 - 24 जनवरी, 1966) के पारसी – जोरोस्यिन विरासत के एक भारतीय परमाणु भौतिक विज्ञानी थे। वह एक प्रतिभाशाली वैज्ञानिक थे जिन्होंने ब्रह्मांडीय किरणों के समझने के लिए योगदान दिया। वह एक प्रतिभाशाली प्रशासक भी थे जिन्होंने भारत के परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम की स्थापना और विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्हें भारत के परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम का जनक माना जाता है। ऐसे समय में जब परमाणु शक्ति कार्यक्रम अभी भी दुनिया भर में अपनी प्रारंभिक अवस्था में थे, उन्होंने नव स्वतंत्र भारत में इस तरह का एक कार्यक्रम शुरू करने की दूरदर्शिता और साहस का अदम्य परिचय दिया, इस विश्वास के साथ कि परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के लिए विज्ञानी प्रतिभा और भौतिक संसाधन उपलब्ध होंगे। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोगों के कार्यक्रम को प्रेरक दिशा दी। 1955 में, वे जेनेवा में आयोजित के परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन के अध्यक्ष थे। उनकी मृत्यु के बाद भारत के परमाणु ऊर्जा संस्थान को उनके सम्मान में भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र का नाम दिया गया। इसके अलावा उन्होंने इलेक्ट्रॉनिक्स, अंतरिक्ष विज्ञान, रेडियो खगोल विज्ञान और सूक्ष्म जीव विज्ञान में भी अनुसंधान को प्रोत्साहित किया।

रॉबर्ट एस एंडरसन (1975) के शब्दों में,

" होमी भाभा के दादा जी का एक अच्छा पुस्तकालय था, जिसमें उनके पिता ने कला पर पुस्तकें जोड़ीं, जब वे ऑक्सफोर्ड और लंदन में छात्र के रूप में थे। बचपन में होमी ने चित्रकला के सबक लिए और अपने परिपक्व जीवन में इस अभिरुचि को जारी रखा। भाभा का मानना था कि अपने कार्यस्थल को सुन्दर सुसज्जित बनाए रखना महत्वपूर्ण है। उनके पिता और मौसी दोनों के शास्त्रीय रिकॉर्ड (बीथोवेन, मोजार्ट, वेर्डी, वैगनर) के संग्रह थे। सिंफ़नी और ओपेरा संगीत के प्रति उनकी आजीवन अभिरुचि 16 साल की उम्र (1925) में दृढ़ हो गई। वियना, बोस्टन, या जहाँ भी वे होते संगीत समारोहों में अक्सर जाते थे। "

विश्व हिन्दी न्यास की त्रैमासिक विज्ञान पत्रिका

World Hindi Foundation, Inc.
A Tax Exempt, Charitable & Educational Foundation
(ID 31-1679275)
website : worldhindifoundation.org

Executive Director
Mr. Kailash Sharma
140-24G, Donizetti Pl., Bronx, NY 10475, USA
Ph. (718) 379-5449 Email : KCSharma@aol.com

Secretary
Dr. Shyam Shukla
44949, Couger Circle, Fremont, CA 94539
Ph. : (510) 770-1218

Treasurer
Mr. Pradeep Agarwal
31 Rutgers, W.Orange, NJ 07052 (USA)
Ph. (646) 472-6320 Email : pnagarwal@aol.com

Chief Editor : Ram Chaudhari
54, Perry Hill Road, Oswego, NY, 13126, USA
email : chaudhar@oswego.edu
Phone : (315) 343-3583 (R)

Resident Editor : Dr. Om Vikas
C-15 Tarang Apartments
19, I P Extn. Delhi - 110 092 (India)
Email : dr.omvikas@gmail.com

Editorial Board

Dr. Vijay Gaur
9098, Underwood Lane, N.
Maple Grove, MN. 55369, USA
Email : vpgour@gmail.com

(Dr.) Mrs. G.K. Gill
1419, Sector-19
Faridabad 121002 (Haryana) India
Email : gill_gk1956@rediffmail.com

Dr. Subodh Mahanti
Crescent Apartment,
Plot No. 2 Sector-18, Dwarka,
New Delhi-110075 (India)
Email : -subodh@vigyanprasar.gov.in

Dr. K.K. Mishra
Homi Bhabha Science Education Centre
Tata Institute of Fundamental Reseach
V.N. Purav Marg, Mankhurd,
Mumbai-400088. (India)
Email : kkm@hbcse.tifr.res.in

Mr. Vishwamohan Tiwari
Air Vice Marshal (Retired)
E-143/21, Noida 201301, India
Email : 1.vishwa.mohan@gmail.com

Public Relation Committee

Dr. Vijay Bhargav (President)
F 6/1 Sector 7 Market
Vashi, Navi Mumbai-400703, India

Prof. Mahesh Dube
R-36, Mahalaxmi Nagar, Near Bombay Hospital
Indore-452010 (M.P.) India

मुख्य सम्पादक : राम चौधरी
54, पैरी हिल रोड, ऑसवीगो (न्यूयॉर्क), यू.एस.ए.
फोन : (315) 343-3583 (नि.),
ई-मेल : chaudhar@oswego.edu

स्थानीय सम्पादक : डॉ. ओम विकास
C-15 तरंग अपार्टमेंट्स
19 आई पी एक्स. दिल्ली-110 092 (भारत)
ईमेल : dr.omvikas@gmail.com

सम्पादक मण्डल

डॉ. विजय गौड़
9098, अंडरवुड लेन (एन)
मैपल ग्रोव, एम.एन. 55369, यू.एस.ए.
ईमेल : vpgour@gmail.com

(डॉ.) श्रीमती जी.के. गिल
1419, सेक्टर-19
फरीदाबाद 121002 (हरियाणा) भारत
ईमेल : gill_gk1956@rediffmail.com

डॉ. सुबोध महंती
क्रिसेन्ट अपार्टमेंट्स
प्लाट नं. 2, सेक्टर-18, द्वारका,
नई दिल्ली-110075 (भारत)
ईमेल : -subodh@vigyanprasar.gov.in

डॉ. के.के. मिश्रा
होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र
टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान,
वी.एन. पुरव मार्ग, मानखुर्द, मुम्बई-400088 (भारत)
ईमेल : kkm@hbcse.tifr.res.in

श्री विश्वमोहन तिवारी
एयर वाइस मार्शल (रिटा.)
ई-143/21 नोएडा 201301, भारत
ईमेल : 1.vishwa.mohan@gmail.com

जनसम्पर्क समिति

डॉ. विजय भार्गव (प्रेसिडेंट)
एफ 6/1 सैक्टर 7 मार्किट,
वाशी, नवी मुंबई-400703, भारत

प्रो. महेश दुबे
R-36, महालक्ष्मी नगर, बाम्बे हॉस्पिटल के पास,
इन्दौर-452010 (म.प्र.), भारत

विषय क्रम

सम्पादकीय 2

सुरक्षित परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम 3
विजय कुमार भार्गव

बिखरी शक्तियों का संगठन-विज्ञान का एक दृष्टान्त 7
राम चौधरी

यूनीकोड से फोनीकोड : श्रुति क्रांति की ओर 11
ओम विकास

भारत में आधुनिक रसायनविज्ञान के जनक आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय 13
कृष्ण कुमार मिश्र

नाइट्रिक ऑक्साइड : एक संक्षिप्त चर्चा 16
कुमार आशुतोष

एक नई पृथ्वी की खोज 19
शशांक द्विवेदी

खाद्य पदार्थों में रंगों का बढ़ता उपयोग एवं उनके दुष्प्रभाव 22
शिप्रा शर्मा एवं शिखा जैन

निवेदन

■ पत्रिका के लिए, वैज्ञानिक विषयों पर 2,000 से 5,000 शब्दों तक के लेख, तथा स्तम्भों के लिए उचित सामग्री सम्पादक के पास भेजें। हम आपको मानदेय देने में असमर्थ हैं। ■ पत्रिका में विज्ञान-क्लबों की गतिविधियों तथा प्रतियोगिताओं की रिपोर्टों का स्वागत है। प्रतियोगिताओं को प्रोत्साहित करने के लिए हम आर्थिक सहायता देने के लिए तैयार हैं। ■ पत्रिका को शिक्षा संस्थाओं, वैज्ञानिक संस्थानों तथा वैज्ञानिकों तक पहुँचाने में सहायता करें, उनके नाम-पते सम्पादक अथवा जन सम्पर्क समिति के पास भेजें। पत्रिका के सुधार के लिए आपके सुझावों का स्वागत है। ■ यदि आप हमारे विचारों से सहमत हैं, तो लोगों से उनकी चर्चा करें। ■ पत्रिका में व्यक्त विचार स्वतन्त्र रूप से लेखकों के हैं। न्यास का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

सम्पादकीय

भारत में अंग्रेज़ी बनाम हिन्दी

सर मार्क टली, पूर्व ब्यूरो चीफ, बी.बी.सी. नई दिल्ली का कथन इस प्रकार है :

दिल्ली में आयोजित पिछले पुस्तक मेले की। पाँच हाल जाने-पहचाने प्रकाशकों के थे। पेंगुइन, आक्सफर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, मैकमिलन आदि समेत अंग्रेज़ी के भारतीय प्रकाशक। भारतीय भाषाओं के लिए केवल एक हॉल था। दिल्ली में जहाँ मैं रहता हूँ, उसके आस-पास अंग्रेज़ी पुस्तकों की तो दर्जनों दुकाने हैं, हिन्दी की एक भी नहीं। हकीकत तो यह है कि दिल्ली में मुश्किल से ही हिन्दी पुस्तकों की कोई दूकान मिलेगी। टाइम्स ऑफ इंडिया समूह के समाचार पत्र नवभारत टाइम्स की प्रचार संख्या कहीं ज़्यादा होने के बावजूद भी विज्ञापन की दरें, अंग्रेज़ी अख़बारों के मुकाबले में अत्यन्त कम है।

इन तथ्यों के उल्लेख का एक विशेष कारण है।

हिन्दी दुनिया की सबसे ज्यादा बोली जाने वाली पाँच भाषाओं में से एक है। जबकि भारत में बमुश्किल पाँच प्रतिशत लोग अंग्रेजी समझते हैं। कुछ लोगों का मनना है कि यह प्रतिशत दो से ज्यादा नहीं है। नब्बे करोड़ की आबादी वाले देश में दो प्रतिशत जानने वालों की संख्या 18 लाख होती है, और अंग्रेजी प्रकाशकों के लिए यही बहुत है। यही दो प्रतिशत बाकी भाषा-भाषियों पर अपना प्रभुत्व जमाए हुए हैं। हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं पर इस दबदबे के कारण गुलामी मानसिकता तो है ही, उससे भी ज्यादा भारतीय विचार को लगातार दबाना, और चंद कुलीनों के आधिपत्य को बरकरार रखना है।

इंगलैंड में मुझसे अक्सर संदेहभरी नजरों से यह सवाल पूछा जाता है। *तुम क्यों भारतीयों को अंग्रेज़ी के इस वरदान से वंचित करना चाहते हो जो इस समय विज्ञान, कंप्यूटर, प्रकाशन और व्यापार की भाषा बन चुकी है?* तुम क्यों दंभी देहाती (स्नोब नेटिव) बनते जा रहे हो? मुझे बार-बार यह बताया जाता है कि भारत में संपर्क भाषा के रूप में अंग्रेजी क्यों जरूरी है, गोया यह कोई शाश्वत सत्य हो। इन तर्कों के अलावा जो मुझे अखरती है, वह है भारतीय भाषाओं के ऊपर अंग्रेजी का विराजमान होना। क्योंकि मेरा यकीन है कि बिना भारतीय भाषाओं के भारतीय संस्कृति जिंदा नहीं रह सकती।

आइए, शुरू से विचार करते हैं। सन् 1813 में ईस्ट इंडिया कम्पनी के बीस साल चार्टर का नवीकरण करते समय साहित्य को पुनर्जीवित करने के लिए, यहाँ की जनता के ज्ञान को बढ़ावा देने के लिए विज्ञान को प्रोत्साहन देने के लिए, एक निश्चित धनराशि मुहैय्या कराई गई। लेकिन इसका उपयोग भारतीय भाषाओं के विकास के लिए नहीं किया गया। अंग्रेज़ी का संभवतः सब से खतरनाक पहलू है अंग्रेज़ी वालों में कुलीनता या विशिष्टता का दंभ।

कोढ़ में खाज का काम करने में अंग्रेजी पढ़ाने का ढंग भी है। पुराना अंग्रेजी साहित्य भी पढ़ाया जाता है। मेरे भारतीय मित्र मुझे अपने शेक्सपियर के ज्ञान से मुझे शर्मिंदा कर देते हैं। अंग्रेज़ी लेखकों के बारे में उनका ज्ञान मुझसे कई गुना ज्यादा है। एन. कृष्णस्वामी और टी रामन ने इस बाबत ठीक ही लिखा है, जो अंग्रेज़ी जानते हैं उन्हें भारतीय साहित्य की जानकारी नहीं है, और जो भारतीय ज्ञान के पंडित हैं वे अपनी बात अंग्रेजी में नहीं कह सकते हैं। जब तक हम इस दूरी को समाप्त नहीं करते, अंग्रेजी ज्ञान जड़विहीन ही रहेगा। यदि अंग्रेज़ी पढ़ानी ही है तो उसे विश्व से बाकी साहित्य के साथ जोड़िए न कि ब्रिटिश संस्कृति के इकहरे द्वीप से।

चलो इस बात पर भी विचार कर लेते हैं कि अंग्रेजी को कुलीनों तक मात्र सीमित करने के बजाय सारे देश की सम्पर्क भाषा क्यों न बना दिया जाए? नम्बर एक, मुझे नहीं लगता कि इसमें सफलता मिल पाएगी (आंशिक रूप से राजनैतिक कारणों से भी); नम्बर दो, इसका मतलब होगा भविष्य की पीढ़ियों के हाथ से उनकी भाषा संस्कृति को जबरन छीनना। निश्चित रूप से *भारतीय राष्ट्र* की इमारत किसी विदेशी भाषा की नींव पर नहीं खड़ी हो सकती। भारत, अमेरिका या आष्ट्रेलिया की तरह महज़ भाषाई समूह नहीं है। यह उन भाषाओं की सभ्यता है जिसकी जड़ें इतनी गहरी हैं कि उन्हें सदियों की औपनिवेशिक गुलामी भी नहीं हिला पाई।

सम्पर्क भाषा का प्रश्न निश्चित रूप से अत्यन्त जटिल है। यदि हिन्दी के लंबरदारों ने यह आभास न दिया होता कि वे सारे देश पर हिन्दी थोपना चाहते हैं, तो समस्या सुलझ गई होती। अभी भी देर नहीं हुई है। हिन्दी को अपने सहज रूप में बढ़ाने की जरूरत है। और साथ ही प्रान्तीय भाषाओं को भी, जिससे यह भ्रम न फैले कि अंग्रेजी साम्राज्यवाद की जगह हिन्दी साम्राज्यवाद लाया जा रहा है।

यहाँ सबसे बड़ी बाधा हिन्दी के प्रति तथाकथित कुलीनों की नफरत है। आप बंगाली, तमिल या गुजराती पर नाज कर सकते हैं, पर हिन्दी पर नहीं। क्योंकि कुलीनों की प्यारी अंग्रेज़ी को सबसे ज्यादा खतरा हिन्दी से है। भारत में अंग्रेज़ी की मौजूदा स्थिति की बदौलत ही उन्हें इतनी ताकत मिली है, और वे इसे आसानी से नहीं खोना चाहते हैं।

पाठकों से निवेदन है कि वे अपनी प्रतिक्रिया और सुझाव दें, जिन्हें अगले अंक में सुधी पाठक-समूह के बीच रखा जा सकेगा।

सुरक्षित परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम

विजय कुमार भार्गव

ऊर्जा मानव जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है। हम सभी जानते हैं जैसे-जैसे मानव की प्रगति हुई वैसे-वैसे विभिन्न ऊर्जा स्रोतों की खोज होती रही। इस खोज से लकड़ी, कोयला, तेल आदि के ऊर्जा स्रोत मानव को मिले। इन स्रोतों के सीमित भंडार होने के कारण जैसे-जैसे जनसंख्या बढ़ी और मानव की आवश्यकताएँ बढ़ीं वैसे-वैसे नए स्रोतों की खोज जारी रही। उपर्युक्त स्रोत रासायनिक क्रिया पर आधारित है। इस क्रिया के परमाणु के नाभिकों में परिवर्तन नहीं होता उनके इलेक्ट्रॉनों की स्थिति में परिवर्तन होता है। इसके द्वारा नए यौगिकों के कण उत्पन्न होते हैं और कुछ इलेक्ट्रॉन वोल्ट ऊर्जा उत्पन्न होती है। (एक इलेक्ट्रॉन वोल्ट ऊर्जा का मान 1.6×10^{-a} जूल (a=19), अथवा 1.6×10^{12} अर्ग)।

परमाणु ऊर्जा जिसे वास्तव में हमें नाभिक ऊर्जा कहना चाहिए, बिलकुल अलग प्रकार की ऊर्जा है। इसकी उत्पत्ति परमाणु के नाभिक से होती है। नाभिक ऊर्जा पर चर्चा करने से पहले भौतिकी की कुछ महत्त्वपूर्ण खोजों का उल्लेख करना आवश्यक है।

विकिरणधर्मिता या विकिरण सक्रियता की खोज सन् 1895 में हैनरी बैक्वेरल द्वारा की गई थी। बैक्वेरल एवं उनके सहयोगियों ने, जिसमें मेरी एवं पियर क्यूरी प्रमुख हैं, पाया कि विघटनाभिक परमाणुओं (वे परमाणु जिनके नाभिक में विघटन होता हो) से तीन प्रकार के कण उत्सर्जित होते हैं, उन्हें अल्फा α, बीटा β, γ गामा का नाम दिया गया। वे अत्यन्त ऊर्जावान होते हैं, अल्फा कण की ऊर्जा का मान 5 लाख इलेक्ट्रॉन वोल्ट (5 Mev) पाया गया। विघटनाभिकता एक स्वचालित अभिक्रिया है, उसकी गति में कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता।

रदरफोर्ड ने प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया कि अल्फा कण, द्वि-आयनीकृत हीलियम परमाणु है। उन्होंने अल्फा कण का प्रयोग प्रक्षेपास्त्र के रूप में किया और सिद्ध किया कि परमाणु प्रकृति का मूल कण नहीं है, उसके दो घटक हैं, एक नाभिक तथा दूसरा इलेक्ट्रॉन-समूह। परमाणु का अर्धव्यास लगभग 10^{10} मीटर तथा नाभिक का अर्धव्यास लगभग $10^{\ a}$ मीटर (a=15), होता है। नाभिक में परमाणु का धनावेश तथा अधिकांश द्रव्यमान केन्द्रित है। सौर मंडल में जैसे ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं वैसे ही इलेक्ट्रॉन नाभिक की परिक्रमा करते हैं। नाभिक और इलेक्ट्रॉन का आवेश मिलाकर शून्य होता जाता है।

सन् 1932 में, रदरफोर्ड के एक सहयोगी, जेम्स चैडविक ने एक नए कण न्यूट्रॉन की खोज की। उसका द्रव्यमान प्रोटॉन के द्रव्यमान से कुछ अधिक पाया गया था, न्यूट्रॉन का विद्युत आवेश शून्य पाया गया। नाभिक के अंदर न्यूट्रॉन स्थाई रहता है, पर उत्तेजित होने पर प्रोटॉन और इलेक्ट्रॉन में क्षरित हो जाता है। नाभिक के दोनों घटकों, प्रोटॉन और न्यूट्रॉन को न्यूक्लियोन कहा जाता है, उनके बीच विशाल आकर्षक बल काम करता है, जो प्रोटॉनों के बीच विकर्षण बल से लगभग 100 गुणा शक्तिशाली होता है। अतः नाभिक में प्रोटॉनों के बीच विशाल विकर्षण होते हुए भी अनेक परमाणुओं के नाभिक स्थाई बने रहते हैं।

शून्य आवेश होने के कारण, नाभिक भौतिकी में, न्यूट्रॉन एक अत्यन्त कारगर अस्त्र सिद्ध हुआ। इस अस्त्र का व्यापक प्रयोग करने वाले वैज्ञानिकों के नाम हैंइटली के एनरिको फर्मी, फ्रांस के आइरीनजोलियट-क्यूरी, जरमनी के ऑटो हान तथा फिट्ज स्ट्रासमान। इन अभिक्रियाओं में अनेक नए समस्थानिकों (आइसोटोपों) का निर्माण हुआ। फर्मी का विश्वास था कि न्यूट्रॉन के अवशोषण द्वारा भारी परमाणुओं के नाभिकों से परायूरेनियम (ट्रान्सयूरेनियम) तत्त्वों के परमाणुओं का निर्माण होगा। फर्मी भौतिकी के दोनों पक्षोंसैद्धान्तिक एवं प्रायोगिकमें सिद्धहस्त थे, सन् 1938 में उन्हें भौतिकी का नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया था। फर्मी रसायनशास्त्र में उतने प्रखर नहीं थे। अतः वे नाभिक के विखंडन की खोज में असफल रहे।

हमें नाभिक के विखंडन तथा विघटनाभिकता के भेद को स्पष्टतः समझ लेना चाहिए। विघटनाभिकता में अल्फा, बीटा, गामा का उत्सर्जन होता है। यह स्वचालित क्रिया है, इसे किसी प्रकार घटाया-बढ़ाया नहीं जा सकता। नाभिक विखंडन स्वचालित अभिक्रिया नहीं है, इसे न्यूट्रॉन द्वारा नाभिक लगभग दो भागों में विभाजित हो जाता है, साथ में नाभिक से दो या तीन न्यूट्रॉन उत्पन्न होते हैं और विखंडन से विशाल ऊर्जा उत्पन्न होती है। न्यूट्रॉनों के अवशोषण द्वारा, अभिक्रिया को इच्छानुसार मन्द अथवा बन्द किया जा सकता है, और नियंत्रित तौर से ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है।

नाभिक के विखंडन की खोज का श्रेय जर्मनी के दो वैज्ञानिकों, हान तथा स्ट्रासमान को जाता है। हान एक प्रतिभाशाली भौतिकज्ञ तथा स्ट्रासमान एक प्रखर रसायनज्ञ थे। उन्होंने सन् 1939 में प्रयोगों द्वारा

* विजय कुमार भार्गव, सेवा निवृत्त, वरिष्ठ वैज्ञानिक, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र एवं परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद, मुम्बई, भारत

एफ-6/1, सैक्टर 7 (मार्केट), नवी मुम्बई 400703, भारत, ईमेल :

सिद्ध किया कि यूरेनियम पर न्यूट्रॉन के प्रक्षेपण से यूरेनियम का विखंडन, दो तत्त्वों, बेरियम तथा क्रिप्टन एवं तीन न्यूट्रॉनों की उत्पत्ति होती है। इस अभिक्रिया को निम्न समीकरण से दर्शाया जा सकता है

$$^{235}U_{92+}\,no^{142} = Ba_{56+91}\,Kr_{36+}\,(3)^{1}\,no$$

यहाँ यूरेनियम235 यूरेनियम तत्त्व का एक समस्थानिक है। यूरेनियम तत्त्व के समस्थानिक हैं, यू-233 से लेकर यू-238 तक। इसमें यू-235 विखंडनीय तथा यू-238 से प्लूटोनियम बनाया जा सकता है, जो विखंडनीय है। यदि हम उपर्युक्त समीकरण के दोनों ओर द्रव्यमानों की तुलना करें, तो पाएँगे कि दाहिनी ओर की तुलना में बाँई ओर का द्रव्यमान अधिक है। अतः आइन्सटाइन के समीकरण $E=mc^2$ द्वारा उत्पन्न ऊर्जा का मान ज्ञात कर सकते हैं, कि यूरेनियम के एक नाभिक के विखंडन से 20 करोड़ इलेक्ट्रॉन वोल्ट ऊर्जा उत्पन्न होती है।

परमाणु बम विस्फोट से उत्पन्न ऊष्मा एवं विकिरण पदार्थ हानिकारक सिद्ध हुए पर सावधानी बरतते हुए एवं उपयुक्त साधनों का प्रयोग करते हुए सुरक्षित परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के द्वारा इनका लाभकारी उपयोग भी संभव हो सका।

परमाणु ऊर्जा से आम जनता का परिचय उसके विध्वंसकारी रूप से हुआ। सन् 1949 में जापान के हिरोशिमा और नागासाकी शहर परमाणु बम विस्फोट से तहस नहस हो गए। इस विस्फोट से उत्पन्न ताप व कम्पन से पूरा-का-पूरा शहर तबाही के कगार पर पहुँच गया एवं परमाणु के विखंडन से निष्कासित विकिरणधर्मी पदार्थ वायु के साथ जापान ही नहीं, आसपास के अन्य देशों की उपजाऊ जमीन पर भी गिरे। विकिरणधर्मी पदार्थों से निकले विकिरण हानिकारक होते हैं इनमें से कुछ कई वर्षों तक विकिरण उत्सर्जित करते रहते हैं। उपजाऊ जमीन पर गिरे पदार्थ पेड़, पौधों के माध्यम से कई पीढ़ियों तक मानव को विकलांग करते रहे।

विखंडन प्रक्रिया केवल कुछ भारी परमाणुओं में होती है। प्रकृति में केवल 235 नाभिकीय कणों (143 न्यूट्रॉन और 92 प्रोटॉन) एवं 233 नाभिकीय कणों (141 न्यूट्रॉन और 92 प्रोटॉन) वाले यूरेनियम परमाणु में ही विखंडन के गुण हैं। यूरेनियम 235 में एक न्यूट्रॉन प्रवेश कराने पर वह विखंडित हो जाता है। कुछ नाभिकों में न्यूट्रॉन प्रवेश कराने पर वे विखंडित न होकर विखंडनीय बन जाते हैं। ये परमाणु हैं238 नाभिकीय कणों वाला प्लूटोनियम एवं 232 नाभिकीण कणों वाला थोरियम, जो एक-एक न्यूट्रॉन पाकर 239 नाभिकीय कणोंवाला प्लूटोनियम व 233 नाभिकीय कणों वाला यूरेनियम बन जाते हैं। ये दोनों ही विखंडनीय हैं।

यह सिद्धान्त आइन्सटीन ने प्रतिपादित किया था। उसके अनुसार $E=mc^2$ जिसमें E प्राप्त ऊर्जा, m नष्ट हुए पदार्थ की मात्रा व c प्रकाश का वेग है। इसके अनुसार एक ग्राम पदार्थ नष्ट होने पर 9×10^{20} अर्ग ऊर्जा प्राप्त होती है जो 2.15×10^{13} कैलोरी के बराबर होती है। एक कैलोरी ताप से एक ग्राम पानी का तापमान 1 डिग्री सेन्टीग्रेट बढ़ता है। इसी सिद्धान्त के आधार पर विखंडन में नष्ट हुए परमाणु की मात्रा ताप ऊर्जा में बदल जाती है। उदाहरण के लिए यूरेनियम 235 (परमाणु द्रव्यमान (मात्रा) इकाई 235.1175) के नाभिक में एक न्यूट्रॉन (परमाणु द्रव्यमान इकाई 1.0089) डालने पर कुल नाभिकीय कणों की संख्या 236 (परमाणु द्रव्यमान इकाई 236.1265) हो जाती है। विखंडन होने पर 92 (परमाणु द्रव्यमान इकाई 91.9264) नाभिकीय कणों वाला क्रिप्टन और 141 (परमाणु द्रव्यमान इकाई 140. 9477) नाभिकीय कणों वाला बेरियम या ऐसे ही दो अलग-अलग नाभिकीय कणों और तत्त्वों की जोड़ी बनती है और 3 (परमाणु द्रव्यमान इकाई 3.02694) न्यूट्रॉन निकलते हैं। विखंडन प्रक्रिया में न्यूट्रॉन व प्रोटॉन की कुल संख्या बराबर रहती हैं, पर परमाणुओं की कुल मात्रा कम हो जाती है। यह कम हुई मात्रा ऊर्जा में बदलती है। किसी भी परमाणु की मात्रा का अनुमान उसकी परमाणु द्रव्यमान इकाई से लगाया जाता है। इस उदाहरण में विखंडन से पहले कुल द्रव्यमान इकाई 236. 1265 थी और अविखंडन के बाद कुल परमाणु द्रव्यमान इकाई 235. 911 हुई। इस प्रकार परमाणु द्रव्यमान (मात्रा) इकाई .2155 ($.03590\times10^{23}$ ग्राम) के कण नष्ट होकर ऊर्जा में बदल जाते हैं। यह ऊर्जा ताप व इनसे उत्पन्न नाभिकों एवं न्यूट्रॉनों को गति देती है। इस ताप ऊर्जा से जल गर्म किया जाता है जो भाप में बदलकर टरबाइन चलाता है। टरबाइन से जुड़े चुम्बकीय क्षेत्र में रखी संचालक तारों की कुंडली घुमती है। जब संचालक चुम्बकीय क्षेत्र में घूमता है तब विद्युत पैदा होती है। कोयला के बिजली घरों में ताप ऊर्जा कोयला ईंधन के जलने से मिलती है, परमाणु बिजली घरों में विखंडनीय तत्त्व ईंधन का काम करता है। 1 ग्राम पदार्थ से प्राप्त ऊर्जा से 2.5×10^{a} (a=7) यूनिट (किलोवाट घंटा) विद्युत प्राप्त होती है।

इस ऊर्जा से बिजली उत्पन्न की जा सकती है, विशालकाय जहाज तथा पनडुब्बियाँ चलाई जा सकती हैं। विखंडन ऊर्जा का प्रयोग नाभिकीय बम अथवा हाइड्रोजन बम बनाने के लिए किया जा सकता है। परमाणु के नाभिक के विखंडन द्वारा ऊर्जा का महान् स्रोत प्राप्त हुआ। इस अनुसंधान में अमेरिका के वैज्ञानिकों के अतिरिक्त योरोप से अमेरिका आए हुए अनेक वैज्ञानिकों का महत्त्वपूर्ण योगदान है, इनमें इटली के वैज्ञानिक, एनरीको फर्मी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। प्रयोगों द्वारा उन्हें सिद्ध किया कि नाभिक ऊर्जा का प्रयोग रचनात्मक एवं विध्वंसकारी, दोनों प्रकार से किया जा सकता है।

ऊपर बताया गया है कि यूरेनियम के नाभिक में एक न्यूट्रॉन प्रवेश कराने से विखंडन होने पर 3 न्यूट्रॉन निकलते हैं। इन तीन से तीन यूरेनियम नाभिकों का विखंडन करके 9 न्यूट्रॉन हो जाते हैं और इस प्रकार अधिक-से-अधिक विखंडन क्रियाएँ होती हैं। यदि ये क्रियाएँ खुले स्थान पर हों तो सारी ऊर्जा चारों ओर फैल जाती है। अतः इस क्रिया को किसी पात्र के अंदर सीमित रखने से ही उसकी ऊर्जा का उपयोग किया जा सकता है। इस पात्र को रिएक्टर या परमाणु भट्ठी कहते हैं।

इन परमाणु भट्टियों के निर्माण में सुरक्षा प्रबंधों के प्रावधान एवं उनका कड़ाई से पालन करना अत्यंत आवश्यक है। ऐसा न करने पर थ्री माइल आइलैंड (अमेरिका) व चेर्नोबिल (रूस) रिएक्टरों जैसी दुर्घटनाएँ हो सकती हैं। इन दुर्घटनाओं से ताप व कम्पन द्वारा आस-पास की इमारतें ध्वस्त हुई एवं विकिरणधर्मी पदार्थों के फैलने से मानव को क्षति का सामना करना पड़ा। नियमों के पालन न करने और भूकम्प जैसी प्राकृतिक घटनाओं से विस्फोट जैसी स्थिति पैदा हो सकती है। रिएक्टर परिचालन में यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि जन सुरक्षा के लिए विकिरणधर्मी पदार्थ पर्यावरण में न छोड़े जाएँ, कार्मिकों को मिलने वाली विकिरण मात्रा न्यूनतम संभव हो और किसी हालत में स्वीकृत सीमा से अधिक न हो। इसके अलावा रिएक्टर में उत्पन्न विकिरणधर्मी अपशिष्ट निपटान व्यवस्था भी सुरक्षित ढंग से हो और विस्फोटक स्थिति होने पर किसी भी हालत में ऊष्मा एवं विकिरणधर्मी पदार्थ चारदीवारी में रहें। विकिरण सुरक्षा के इसी दृष्टिकोण से रिएक्टर स्थापन के लिए स्थल चयन, उसकी अभिकल्पना (डिजाइन), निर्माण, अभिचालन (कमिशनिंग), प्रचालन (ऑपरेशन) एवं अनुरक्षण (मेन्टेनेन्स) किया जाता है साथ ही आपात्कालीन सुरक्षा व्यवस्था भी की जाती है।

स्थल चयन : इसमें प्राकृतिक बाधाओं जैसे भूकम्प, बाढ़, इत्यादि एवं मानव प्रेरित दुर्घटनाओं जैसे वायुयान का ध्वंस, विस्फोट आदि की संभावनाओं, स्थानीय जलवायु का अवलोकन एवं पर्याप्त मात्रा में जल स्रोत की उपस्थिति पर ध्यान दिया जाता है। इसके अलावा यह भी देखा जाता है कि यह स्थूल भूकम्पीय कटिबंध या उससे अधिक वाले क्षेत्र में नहीं है। भूगर्भीय अंश या विस्फोटक पदार्थों के भंडार से 5 किलोमीटर और बड़े हवाई अड्डे से 8 किलोमीटर से अधिक दूर पर स्थल है। हाँ यह भी सुनिश्चित किया जाता है कि स्थल से 5 कि.मी. दूरी तक 2000 से अधिक की, 10 कि.मी. तक 10000 से अधिक तक एवं 30 कि.मी तक के अंदर 100000 जनसंख्या नहीं है। साथ ही वन पशुओं की सुरक्षा का ध्यान रखा जाता है।

अभिकल्पना : अभिकल्पना करते समय ऐसे प्रावधान किए जाते हैं जिससे प्रचालन के समय ईंधन छड़ें सुरक्षित रहें और उच्च ताप व दाब पर ईंधन की छड़ों का आवरण फटे नहीं। सामान्य व असामान्य स्थिति में रिएक्टर सुरक्षित ढंग से बंद किया जा सके; विकिरणधर्मी पदार्थों को पर्यावरण में आने से रोका जा सके, गैस अवस्था में निष्कासित विकिरणधर्मी पदार्थ स्वीकृत सीमा में है। ऐसी व्यवस्था भी होनी चाहिए जिससे विस्फोटक जैसी अवस्था में भी प्रभाव जनमानस तक न पहुँचे। रिएक्टर भवन की दीवार के चारों ओर दूसरी दीवार स्थित की जाती है।

निर्माण : सुरक्षा की दृष्टि से परमाणु विद्युतघर में भवनों, संयंत्रों एवं समाधानों का निर्माण करते समय उपयोग में आने वाले अवयवों, घटकों, निर्माण पदार्थों का पूर्णरूपेण गुणवत्ता नियंत्रित किया जाता हैं इसके लिए उठाए गए कदमों में हैंक्रिया-प्रक्रिया के साथ गुणवत्ता के आश्वासन का प्रबंध, परियोजना (प्लानिंग) स्थल पर सामानों का निरीक्षण, एवं परीक्षण, भंडारण की समुचित व्यवस्था सुनिश्वित करना, संयंत्र निर्माण से संबंधित उपकरणों की जाँच पड़ताल, निर्माण विधियों एवं अन्तर्राष्ट्रीय मापदंड एवं निर्माण संबंधी दस्तावेज का सुसंगठित रख-रखाव सुनिश्चित करना।

अभिचालन : परमाणु विद्युतघर का अभिचालन करके सुनिश्चित किया जाता है कि प्रचालन सुरक्षित ढंग से किया जा सकेगा और विद्युत घर की सारी सुरक्षा प्रणालियाँ अभिकल्पना के अनुकूल कार्य करने में सक्षम हैं।

प्रचालन एवं अनुरक्षण : प्रचालन के दौरान सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए रिएक्टर भवन के अंदर विकिरण क्षेत्र में विकिरण स्तर मापन एवं अवलोकन तथा पर्यावरण में उत्सर्जित विकिरणधर्मी पदार्थ पर पूरा नियंत्रण किया जाता है। साथ ही पैदा हुए विकिरणधर्मी तत्त्वों से युक्त अपशिष्ट का सुरक्षित भंडारण तथा उन्हें नष्ट करने की व्यवस्था भी की जाती है।

आपात्कालीन : आपात्कालीन व्यवस्था में यह सुनिश्चित किया जाता है कि आपात् स्थिति के समय संयंत्र भवन को कोई खतरा नहीं, प्रभावित क्षेत्र संयंत्र स्थल की सीमा के अंदर हो और स्थल के बाहर जनता प्रभावित न हो।

विश्व में विकिरण सुरक्षा के मापदंडों को निर्धारित करने वाली संस्था है अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेन्सी (आई.ए.ई.ए.) इन मापदंडों का क्रियान्वयन सुनिश्चित करने के लिए हर देश में सरकारी परिषद/एजेंसी होती है। भारत में मापदंडों का क्रियान्वयन सुनिश्चित करने का कार्य परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद, अणुशक्तिनगर, मुंबई करती है। यह परिषद यह भी सुनिश्चित करती है कि विकिरणधर्मी पदार्थों का उपयोग भी मापदंडों के आधार पर होता है। न तो कोई परमाणु बिजलीघर इस परिषद् की अनुमति के बिना प्रचालित हो सकता है और न ही विकिरणधर्मी पदार्थों का उपयोग। परमाणु रिएक्टर में उत्पन्न विकिरणधर्मी पदार्थ से उत्सर्जित विकिरण के हानिकारक प्रभावों के कारण विकिरण सुरक्षा व्यवस्था की जाती है।

कोशिकाओं को नष्ट करने, भेदन क्षमता के होने, विकिरण की सूक्ष्मतम मात्रा के मापन की क्षमता होने के कारण इसका उपयोग चिकित्सा, उद्योग एवं कृषि में भी किया जाता है। यहाँ भी विकिरण सुरक्षा का ध्यान रखा जाता है। चिकित्सा में विकिरण ऊर्जा से कैंसर कोशिकाओं को नष्ट किया जाता है पर यह ध्यान रखा जाता है कि स्वस्थ कोशिकाओं को नुकसान न पहुँचे। शरीर की सतह पर हुए कैंसर, जैसे जीभ और गर्भाशय कैंसर, के लिए सीलबंद स्रोत को उस भाग के समीप रखा जाता है। इन यंत्रों की स्वीकृति परमाणु ऊर्जा नियामक परिषद से लेनी पड़ती है। रोग निदान के लिए द्रव रूप में विकिरणधर्मी पदार्थ से युक्त उपयुक्त पदार्थ को पिलाया जाता है और शरीर से बाहर आने वाले विकिरण का अवलोकन करके पता लगाया जाता है कि वह

पदार्थ शरीर में कहाँ है। इससे शरीर की क्रियाओं का निदान किया जाता है।

औद्योगिक जगत में बेल्डिंग किए स्थान का चित्रण करके बेल्डिंग की स्थिति का पता लगाया जा सकता है। कृषि जगत में विकिरण द्वारा बीजों में जीन परिवर्तन करके उन्नत फसल का उत्पादन, खाद में विकिरणधर्मी पदार्थ मिलाकर और पौधों में विकिरण की मात्रा का अवलोकन करके खाद ग्रहण करने की क्षमता का पता लगाया जाता है। खाद्य पदार्थों की विकिरणित करके उनमें प्रस्फुटन को रोककर लम्बे समय तक भंडारण किया जा सकता है।

भारत में परमाणु ऊर्जा का उपयोग विद्युत् उत्पादन एवं विकिरणधर्मी पदार्थों के लिए सुरक्षापूर्वक हो रहा है, पर अभी तक हमारे रिएक्टर यूरेनियम आधारित हैं इसके लिए हमें विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता है। हमारे देश में थोरियम का प्रचुर भंडार है। थोरियम आधारित रिएक्टरों का निर्माण करके हम अपने देश भारत को आत्मनिर्भर बना सकते हैं।

आभार : लेख के तकनीकी परामर्श के लिए इस पत्रिका के मुख्य सम्पादक प्रो. राम चौधरी, व साहित्यिक परामर्श के लिए मेरी धर्मपत्नी डॉ. (श्रीमती) प्रेम भार्गव का हार्दिक आभार।

बिखरी शक्तियों का संगठन-विज्ञान का एक दृष्टान्त

राम चौधरी

शक्ति के विद्युत कण जो व्यस्त, विकल बिखरे है निरुपाय,
समन्वय उसका करे समस्त, विजयिनी मानवता हो जाय।
जयशंकर प्रसाद (कामायनी)

निबंध सार

हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं की अवहेलना भारत के विकास में सबसे बड़ी रुकावट है, जितनी जल्दी हम इस सत्य का साक्षात्कार कर ले, उनती ही जल्दी हम विकास के पथ पर अग्रसर हो सकते हैं। हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं के विकास में कोई विरोधाभास नहीं है, मेरी मान्यता है कि हिन्दी का विकास भारतीय भाषाओं के विकास का पर्याय है। हिन्दी के विकास के लिए एक संगठित प्रयास अनिवार्य है।

सूचना महा मार्ग तथा आधुनिक प्रेक्षपास्त्रों का युग विज्ञान का युग है, किसी भी देश की शक्ति का सबसे बड़ा स्रोत उस देश के वैज्ञानिक तथा औद्योगिक संस्थान है। लगभग पचास वर्षों से विदेश-प्रवास के पश्चात मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि भारतीय भाषाओं के माध्यम द्वारा ही आधुनिक ज्ञान-विज्ञान जनता तक पहुँचाया जा सकता है। इसके लिए एक संगठित प्रयास की आवश्यकता है।

विज्ञान जगत में संगठित प्रयास का एक उदाहरण है, परमाणु युग का आविर्भाव। इस प्रयास के कुछ तत्त्वों का उल्लेख करते हुए इस निबन्ध के निष्कर्षों की व्यावहारिकता पर विचार किया जाएगा।

इस निबन्ध के दो आधार वाक्य है

1. इस बात को नकारा नहीं जा सकता कि आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की व्यापक पहुँच जनभाषा के माध्यम से ही संभव है।
2. इसके लिए हमें देशव्यापी ही नहीं विश्वव्यापी संगठन बनाकर यथाशीघ्र अविलम्ब कार्यरत होने की आवश्यकता है।

इस निवेदन के साथ, अपने निबंध पर आता हूँ। एक पहेली बूझने के पश्चात मूल विषय के उल्लेख के दौरान भौतिक विज्ञान से एक संगठित प्रवाह का उदाहरण दिया जाएगा।

पहेली

आप सभी लोग जानते होंगे कि शतरंज का आविष्कार भारत के एक गणितज्ञ ने किया था। उसने इस खेल को उस देश के राजा को दिखाया। राजा प्रसन्न हुआ और गणितज्ञ से इनाम माँगने के लिए कहा। गणितज्ञ का उत्तर था, "महाराजाधिराज, मुझे अपने परिवार के लिए कुछ गेहूँ की आवश्यकता है। आप अपने कर्मचारियों को आदेश दें कि वे शतरंज के पहले खाने पर गेहूँ का एक दाना रखें, दूसरे पर दो दाने, फिर इसी प्रकार दोनों की संख्या को दुगुना करते जाएँ।

जैसा आपको ज्ञात है कि शतरंज में 64 खाने होते हैं। क्या आप अनुमान लगा सकते हैं कि कितने गेहूँ की आवश्यकता होगी? इसका मान विश्व की 1,000 वर्ष की गेहूँ पैदावार है।

कृपया पहेली के कुछ तत्त्वों को ध्यान में रखिएपहेली में पहली संख्या एक है, उसका *गुणांक* है दो। यदि गुणांक एक से अधिक है तो गुणनफल बढ़ता जाता है, एक में दो का गुणा पाँच बार करने से गुणनफल का 32 मान हो जाता है। यदि गुणांक एक से कम है, तो गुणांक का बारंबार प्रयोग करने से गुणनफल शीघ्रता से घटता जाता है। उदाहरणतः यदि गुणांक का मान 0.5 लिया जाए तो पाँच बार गुणा करने से संख्या एक से घट कर केवल 0.0016 रह जाती है, 32 तथा 0.0016 का अनुपात 20,000 है। ध्यान रखने योग्य है कि यदि गुणांक एक से अधिक है तो संख्या बढ़ती है, यदि गुणांक एक से कम है तो संख्या घटती है। गुणांक के बारंबार प्रयोग से चारघातांकी फलन (Exponential Function) बन जाता है। इन फलनों का प्रयोग, विज्ञान की सभी शाखाओं, उदाहरणतः भौतिक विज्ञान, जीवन विज्ञान तथा सामाजिक विज्ञान में किया जाता है।

वैज्ञानिकों की बिरादरी

परमाणु युग के प्रादुर्भाव अनेक देश के वैज्ञानिकों की भागीदारी का परिणाम है। आश्चर्य की बात तो यह है कि इनमें से बहुत से वैज्ञानिक यूरोप के उन देशों से थे जिनके बीच भयानक युद्ध हुए थे। वैज्ञानिकों में भी, देश के अन्य नागरिकों की तरह, देशभक्ति की संकीर्ण भावना होती है, फिर भी उनमें विचारों का आदान-प्रदान उत्तरोत्तर बढ़ता गया है।

*Ram Chaudhari, 54 Perry Hill Road, Oswego, New York, 13126, USA, Email : chaudhar@oswego.edu

विज्ञान के युग का सूत्रपात सोलहवीं शताब्दी के यूरोप में, इस मान्यता के साथ हुआ कि किसी सिद्धान्त को स्वीकार करने से पहले उसे प्रयोग (Experiment) की कसौटी पर परखा जाय। इस मान्यता को वैज्ञानिक पद्धति के नाम से जाना जाता है। इस पद्धति के कई सोपान हैप्रेक्षण (Observation), परिकल्पना (Hypothesis), प्रयोग (Experiment), प्रमेयण (Theory), तथा नियम (laws)। चर्च के महंतों ने इस पद्धति का घोर विरोध किया, गैलिलियो जैसे वैज्ञानिक को जेल-यातना सहनी पड़ी, परन्तु अन्त में, वैज्ञानिक पद्धति को अपनाया गया। सन् 1662 में जब रोयल सोसाइटी ऑफ लन्दन की स्थापना हुई, तो उसका भी मूल मंत्र थाकिसी बात को तब तक सत्य न मानो जब तक उसे स्वयं देख न लो। यूरोप के अन्य देशों में भी वैज्ञानिक संस्थाएँ बनी, और वैज्ञानिक संस्कृति का विकास हुआ। विज्ञान की सूझ से प्रौद्योगिकी में प्रगति हुई, और आई औद्योगिक क्रान्ति, जिसके द्वारा यूरोप के कुछ देश सम्पूर्ण विश्व पर छा गए।

भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में अधिकांश विद्वानों को दो भागों में विभाजित किया जाता है, एक प्रायोगिक भौतिकिज्ञ, जो प्रयोगशाला में विभिन्न प्रकार के प्रयोग करते हैं, दूसरे थ्योरिक भौतिकिज्ञ, जो प्रयोगों के परिणामों को, उस विषय की थ्योरी के आधार पर तर्कसंगत सिद्ध करने का प्रयत्न करते है। यदि प्रयोग के परिणामों तथा थ्योरी के निष्कर्षों में सामंजस्य नहीं पाया जाता, तो थ्योरी की आधारभूत मान्यताओं में परिवर्तन किए जाते हैं, और कई बार नई थ्योरी की रचना भी करनी पड़ती है। दोनों प्रकार के वैज्ञानिकों की जुगलबंदी द्वारा प्रयोग तथा थ्योरी में परिष्कार होता है, थ्योरी की व्यापकता बढ़ती है, थ्योरी से नई परिघटनाओं (Phenomena) को प्रागुक्त (predict) किया जाता है। थ्योरी तब तक सही नहीं मानी जाती जब तक उसकी प्रायोगिक पुष्टि नहीं होती। कर्म प्रधान विश्व करि राखा।

परमाणु के बारे में कुछ तथ्य

जैसा हम जानते हैं, सभी पदार्थ एक या एक से अधिक तत्त्वों से मिलकर बने हैं। पृथ्वी पर पाए गए तत्त्वों की संख्या 92 है, और सबसे भारी तत्त्व का नाम है यूरेनियम। तत्त्वों का सबसे छोटा विभाजन परमाणु होता है। परमाणु को दो भागों में विभाजित किया जाता हैनाभिक, तथा इलेक्ट्रोन। नाभिक के दो घटक (Components) हैप्रोटोन तथा न्यूट्रोन। प्रोटोन पर विद्युत का धनात्मक आवेश होता है, इलेक्ट्रोन पर उतनी मात्रा का ऋणात्मक आवेश तथा न्यूट्रोन अनाविष्ट होता है। न्यूट्रोन की खोज सन् 1932 में हुई थी।

किसी भी परमाणु में प्रोटोन-इलेक्ट्रोन संख्या बराबर होती है, इलक्ट्रोन नाभिक के चक्कर लगाते हैं। परमाणु के इस निदर्श (मॉडल) को हम सौरमंडल-निदर्श कह सकते हैंनाभिक, सूर्य के समान है, तथा इलक्ट्रोन ग्रहों के समान नाभिक की प्रदक्षिणा करते हैं। रसायनिक अभिक्रिया में केवल इलेक्ट्रोन की स्थितियों में ही परिवर्तन होता है, नाभिक में कोई परिवर्तन नहीं होता है। रासायनिक अभिक्रिया में लगभग प्रति अणु में लगभग एक इलेक्ट्रोन-वोल्ट उर्जा का आदान-प्रदान होता है।

एक संगठित प्रवाह

जैसा आप को ज्ञात है, औद्योगिक क्रान्ति का सूत्रपात वाष्प युग से हुआ, फिर आया विद्युत युग, उसके पश्चात परमाणु युग, और आज हम सूचना युग में निवास कर रहे हैं। बिजली के बिना हमारी सब गतिविधियाँ रुक जाती हैं।

बिजलीघर से आपके घर बिजली पहुँचाने के लिए ताँबे के तार लगाए जाते हैं। ताँबे जैसी धातुओं की यह विशेषता है कि उनमें मुक्त इलेक्ट्रोन होते हैं, वे अनियमित रूप से विभिन्न दिशाओं में औसतन् 1,000 किलोमीटर प्रति सेकन्ड के वेग से दौड़ते हैं। यदि तार के ऊपर किसी प्रकार से बिजली का वोल्टेज लगा दिया जाय, तो अनियमित दिशा में जाते हुए भी सभी इलेक्ट्रोन एक मिलीमीटर प्रति सेकन्ड की दिशा में एक निश्चित दिशा में जाने लगते हैं। बिजली का यह संगठित प्रवाह ही बिजली की धारा है जिसके बिना बिजली का कोई भी यंत्र काम नहीं करता है।

कृपया सोचिए, 1,000 किलोमीटर प्रति सेकन्ड के वेग पर आरोपित एक मिलीमीटर प्रति सेकन्ड का सदिश वेग कितना उपयोगी तथा प्रभावशाली है। क्यों आपको कोई संदेह है कि आप जैसे करोड़ों व्यक्तियों की आमदनी का छोटा सा भाग, एक दिशा में लगाकर बड़ा चमत्कार किया जा सकता है!

नाभिक भौतिकी-इटली के वैज्ञानिक, एनरीको फेरमी

कुछ भारी तत्त्वों, उदाहरणतः यूरेनियम, थोरियम रेडियम आदि के परमाणुओं में अबाध रूप से नाभिक परिवर्तन होते रहते हैइसे (विघटनाभिकता (radioactivity) कहा जाता है। इसकी खोज उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों में हुई थी। विघटनाभिकता में तीन प्रकार के विकिरण होते हैंइन्हें अल्फा, बीटा तथा गामा किरणें कहा जाता है। इस प्रक्रिया में, परमाणु लाखों इलेक्ट्रोन-वोल्ट की ऊर्जा उत्पन्न होती है। भौतिकी की इस खोज ने नाभिक भौतिकी के क्षेत्र का जन्म दिया।

जब विभिन्न तत्त्वों के ऊपर, अस्त्र के रूप में, अल्फा किरणों का प्रयोग किया जाता है, तो नाभिक-संरचना की जानकारी मिलती है। न्यूट्रोन की खोज इसी प्रकार के अनुसंधान से हुई थी। चूँकि न्यूट्रोन अनाविष्ट कण है, अतः उसका, प्रोटोन अथवा इलक्ट्रोन की अपेक्षा, नाभिक में प्रवेश सुगम है, अतः नाभिकी के क्षेत्र में न्यूट्रोन का आस्त्रिक प्रयोग एक महत्त्वपूर्ण अध्याय सिद्ध हुआ। इस अध्याय का सूत्रपात करने वाले थे, इटली निवासी एनरीको फेरमी (Enrico Fermi, 1,901-1,954)।

फेरमी प्रारम्भ से ही असाधारण प्रतिभासम्पन्न विद्यार्थी थे। बीस वर्ष की आयु में उन्हें, इटली के पीसा विश्वविद्यालय से डाक्टरेट की उपाधि प्रदान की गई। इसी विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक गैलिलियो (1564-1642) ने, लगभग तीन सौ वर्ष पहले, क्रान्तिकारी अनुसंधान किए थे, और अपनी खोजों को, उस समय के विद्वानों की भाषा, लैटिन, में न लिखकर, जनता की भाषा इटैलियन में लिखा था।

अगले कुछ वर्षों में फेरमी ने अनेक विद्वानों के साथ भौतिकी के कई विषयों पर शोध की। कुछ नाम हैंगौटिंजन (जर्मनी) के मैक्स बौर्न तथा वर्नर हाइजनबर्ग; कोपनहेगन में नील्स बोर, पॉल इहरेनफेस्ट, साम गाउस्मिट, तथा जार्ज उहलेनबैक। उनके शोध-निबन्ध विश्व की ख्यातिप्राप्त शोध-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। सन् 1926 में, 25 वर्ष की आयु में उन्हें इटली के एक प्रसिद्ध विश्वविद्यालय में उन्हें अनुसंधान प्राध्यापक का पद दिया गया; कई प्रतिभाशाली मित्र उनके सहयोगी बनेकुछ नाम हैएदोवर्दो अमाल्दी, (Edverdo Amaldi), फ्रान्को रोस्सेत्ती (Franco Rosseti), एमीलियो सेग्रे (Amelio Segre); चारों मित्र टैनिस के शौकीन खिलाड़ी थे, उनका अनेक वर्षों तक साथ रहा, इटली में भी और अमेरिका में भी।

27 वर्ष की आयु में फेरमी का विवाह एक संभ्रात यहूदी परिवार की युवती लौरा कपोन के साथ हुआ। एक वर्ष पश्चात वे रॉयल अकेडमी ऑफ रोम के सदस्य निर्वाचित हुए। उनकी गणना विश्व के मूर्धन्य भौतिकिज्ञों में होने लगी थी, उन्हें यूरोप के अतिरिक्त अमेरिका की संस्थाओं द्वारा विशेष व्याख्यान देने के लिए बुलाया गया।

सन् 1933 से पहले फेरमी का लगभग सभी शोधकार्य थ्योरिक भौतिकी में था। न्यूट्रोन की खोज हो चुकी थी। फ्रांस के दम्पत्तिआइरीन एवं फ्रैडरिक जोलियट क्यूरी ने अल्यूमिनियम पर अल्फा कण के प्रक्षेपण द्वारा एक नए समस्थानिक (Isotopic) तत्त्व का निर्माण किया। फेरमी ने अल्फा कण के स्थान पर न्यूट्रोन का प्रयोग आवर्त सारिणी (Periodic table) के लगभग सभी तत्त्वों पर किया, और सबसे भारी तत्त्व यूरेनियम पर न्यूट्रोन के प्रयोग से दो नए तत्त्वों, नेप्चूनियम तथा प्लूटोनियम का निर्माण किया।

फेरमी का थ्योरिक भौतिकी में शोधकार्य श्रेष्ठतम कोटि का था, और अब प्रायोगिक-भौतिकी का काम भी उसी श्रेणी का था, वे भौतिकी की दोनों विधाओं में सिद्धहस्त थे। भौतिकी के इतिहास में, न्यूटन के अतिरिक्त कोई अन्य उदाहरण नहीं मिलता, जो दोनों विधाओं में समान रूप से पारंगत हो। सन् 1938 में उन्हें भौतिकी में नोबेल पुरस्कार दिया गया।

तत्कालीन जर्मनी में यहूदियों को सताया जा रहा था, और इटली में भी इसका प्रारंभ होने लगा था। परिणामतः यहूदी वैज्ञानिक यूरोप से पलायन करने लगे थे, सन् 1933 में अल्बर्ट आइन्सटाइन अमेरिका आ गए थे। फेरमी की पत्नी, लौरा, यहूदी परिवार से थीं, उन लोगों ने इटली छोड़ने का निश्चय किया। फेरमी के पास चार विख्यात विश्वविद्यालयों से बुलावे आए थे। उन्होंने कोलम्बिया विश्वविद्यालय को चुना, और 2 जनवरी 1939 को वे सपरिवार अमेरिका पहुँचे। संयोगवश, हंगरी के चार मूर्धन्य विद्वान, यूजीन वीग्नेर, जॉन वॉन नौइमान, लिओ सिलार्द तथा एदवर्ड टैलर भी अमेरिका आ गए थे। विश्व महायुद्ध प्रारम्भ हो गया था, यूरोप छोड़कर अमेरिका में आने वाले वैज्ञानिकों की संख्या बढ़ती गई।

परमाणु युग का आविर्भाव

6 जनवरी 1939 को जर्मनी के दो रसायनज्ञओटो हान (Otto Hahn) तथा फ्रिट्ज स्ट्रासमान (Fritz Strassman) द्वारा एक लेख प्रकाशित किया गया कि यूरेनियम के ऊपर न्यूट्रोन के प्रक्षेपण से यूरेनियम परमाणु का विखंडन (fission) हो जाता है। यह एक क्रान्तिकारी खोज थी। यूरेनियम परमाणु के विखंडन के फलस्वरूप, प्रति परमाणु से, लगभग 200 मिलियन (बीस करोड़) इलेक्ट्रोन-वोल्ट ऊर्जा तथा औसतन, 2.5 न्यूट्रोन उत्पन्न होते हैं। इस संख्या को विखंडन गुणांक कहा जाता है। अमेरिका आते ही, फेरमी ने, हान तथा स्ट्रासमान द्वारा की गई विखंडन-खोज की पुष्टि की।

विखंडन में केवल 10^{-8} सेकन्ड का समय लगता है। सरलता के लिए हम विखंडन गुणांक का मान 2 लेंगे। यदि उपजे हुए दोनों न्यूट्रोनों से यूरेनियम परमाणुओं का विखंडन संभव हो, तो उनसे 4 न्यूट्रोन उपलब्ध होंगे, चार से आठ, और इस प्रकार उनकी संख्या में उसी प्रकार की बढ़ोतरी होगी जैसे शतरंज के आविष्कारक के गेहूँ के दानों की हुई थी। इस अभिक्रिया को श्रृंखला (chain reaction) कहा जाता है। यह अनुमान सरलता से लगाया जा सकता है कि इस प्रकार की ऊर्जा से एक प्रलयकारी विस्फोट होगा। यही, स्वचालित श्रृंखला अभिक्रिया अणुबम्ब का मूलभूत आधार है।

यूरेनियम के विखंडन की खोज जर्मनी में हुई थी। जर्मनी यूरोप के सबसे शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में उभर रहा था। जर्मनी, मार्च 1938 में ऑस्ट्रिया पर, उसके एक वर्ष पश्चात ज़ेकोस्लोवाकिया पर आधिपत्य कर चुका था। यह एक विचित्र संयोग है कि परमाणु शक्ति के सूत्रधार यूरोप से आए वैज्ञानिक थे। उन्हें डर था कि यदि जर्मनी ने पहले बम्ब बना लिया, तो उनका तथा उनकी संस्कृति का भविष्य अंधकारमय होगा। इस आशंका के साथ, 2 अगस्त 1939 को हंगरी से आए हुए तीन भौतिकिज्ञ, यूजीन वीग्नेर (Eugene Wigner), एदवर्द टैलैर (Edwerd Teller) तथा लिओ सिलार्ड (Leo Szilard) विश्व के मूर्धन्य भौतिकिज्ञ अल्बर्ट आइन्सटाइन (Albert Einstein) के पास गए, उनसे अनुरोध किया कि वे राष्ट्रपति फ्रैन्कलिन रूज़वेल्ट को एक पत्र द्वारा परमाणु ऊर्जा की संभावनाओं के बारे में आगाह करें। आइन्सटाइन ने इस आशय का पत्र लिखा

महोदय,

फर्मी तथा सिलार्द द्वारा हाल में की गई नाभिक विखंडन की खोज का समाचार मुझे अभी मिला है। मेरा अनुमान है कि यूरेनियम का विखंडन, ऊर्जा का एक विशाल स्रोत हो सकता है, इसके द्वारा निकट भविष्य में, नए प्रकार का, अत्यन्त विध्वंसकारी बम्ब बनाया जा सकता है। इस विषय में अत्यन्त सर्तकता की आवश्यकता है।... मुझे यह भी समाचार मिला है कि जर्मनी में इस विषय पर काम हो रहा है, और उसने चेकोस्लोवाकिया से यूरेनियम का निर्यात रोक दिया है।

यूरेनियम के विखंडन से ऊर्जा उपलब्ध होने की संभावना प्रदर्शन करना एक बात है, लेकिन उससे बम्ब अथवा विद्युत संयंत्र (Power plant) बनाना दूसरी बात, दोनों में जमीन आसमान का अन्तर है।

परमाणु ऊर्जा के उत्पादन के लिए कई समस्याओं के हल की आवश्यकता है। जैसा कहा जा चुका है, थ्योरिक विखंडन गुणांक 2.5 है, परन्तु, उपजे हुए न्यूट्रोनों के अवशोषण के कारण, सभी न्यूट्रोन विखंडन क्रिया में भाग नहीं ले सकते थे, अतः वास्तविक गुणांक केवल 0.9 था। श्रंखला अभिक्रिया के लिए गुणांक का एक से अधिक होना आवश्यक है।

यह पाया गया था कि विखंडन के लिए कम वेग के न्यूट्रोन अधिक कारगर होते है। यह पाया गया कि न्यूट्रोनों को विशुद्ध ग्रेफाइट में पारित करने से उनका अवशोषण नहीं होता, तथा उनका वेग कम हो जाता है। अतः काफी मात्रा में विशुद्ध ग्रैफाइट की आवश्यकता हुई। खोज द्वारा यह भी पाया गया कि प्रकृति में यूरेनियम के दो समस्थानिक (isotpes) पाए जाते है, एक 238U जो 99.3% दूसरा 235U जो केवल 0.7% मात्रा में पाया जाता है। विखंडन अभिक्रिया केवल 235U में होती है। यह चुनौती सामने आई कि 235U का अनुपात कैसे बढ़ाया जाय।

गुणांक का वास्तविक मान एक से अधिक हो, इसके लिए प्रचुर मात्रा में, तथा विशुद्ध अवस्था में नए प्रकार के पदार्थो का उपलब्ध होना आवश्यक था। इनके निर्माण के लिए विभिन्न प्रकार के विशेषज्ञों, रसायनज्ञ, धातु-वैज्ञानिक आदि की आवश्यकता थी, जो विश्वविद्यालयों उद्योगों तथा अनुसंधान प्रतिष्ठानों में थे।

आइन्स्टाइन द्वारा रूज़वेल्ट को लिखा पत्र प्रभावशाली सिद्ध हुआ। अक्टूबर 1939 में एक राष्ट्रीय यूरेनियम समिति बनाई गई, नए प्रकार के पदार्थ निर्माण करने तथा जुआने का काम बड़े उद्योगों तथा विशेष विश्वविद्यालयों तथा प्रयोगशालाओं को दिया गया। सरकारी प्रतिष्ठानों की ओर से उन्हें विशेष आर्थिक सहायता दी जाने लगी, अनेक बड़ी कम्पनियों को नए पदार्थ बनाने के ठेके दिए गए।

सब से पहले आवश्यकता थी, परमाणु ऊर्जा की प्राप्ति का संभाव्यता अध्ययन (Feasibility Study)। अग्रगामी परियोजना (Pilot Project) के लिए कोलम्बिया विश्वविद्यालय की अपेक्षा शिकागो विश्वविद्यालय अधिक उपयुक्त समझा गया और फेरमी तथा उनके सहयोगियों को शिकागो भेजा गया। वहाँ प्रचुर मात्रा में विशुद्ध यूरेनियम, ग्रेफाइट आदि पदार्थ भेजे गए। फेरमी टोली का उद्देश्य था, नियंत्रित रूप से परमाणु ऊर्जा का मोचन (release)। उनके निर्देशन में 2 दिसम्बर 1942 को पहले परमाणु पुंज (Atomic Pile) का सफल परीक्षण हुआ।

फेरमी के सफल परीक्षण में कई महीने पहले, तीन स्थानों, ओक रिज (टैनसी), हैनफोर्ड (वाशिंगटन), तथा शिकागो में बड़े पैमाने पर नाभिक रिएक्टर बनाने का कार्य प्रारम्भ हो गया था, इस विश्वास के साथ कि फेरमी श्रंखला अभिक्रिया का सफल परीक्षण करके दिखा देंगे। अमेरिका के कई विश्वविद्यालयोंबर्कले (Berkeley), प्रिन्सटन (Princeton), एम. आई. टी (M.I.T.) कोलम्बिया (Columbia) आदि में विखंडन प्रक्रिया द्वारा परमाणु ऊर्जा पर थ्योरिक तथा प्रायोगिक कार्य भी हो रहा था।

अब सब प्रयासों के केन्द्रीकरण की आवश्यकता थी। 17 सितम्बर, 1941 को जनरल लैज़्ली ग्रोव की कमान्ड में न्यू मैक्सिको के एक एकान्त स्थल परमाणु बम्ब के लिए प्रयोगशालाएँ, कर्मचारियों तथा वैज्ञानिकों के लिए निवास स्थान बनाने का काम प्रारम्भ कर दिया गया। सैकड़ों वैज्ञानिक, लगभग 3,000 इन्जीनियर इस काम में लगे। फरवरी 1943 में रोबर्ट ओपनहाइमर परमाणु बम्ब प्रोजेक्ट के निर्देशक बनाए गए।

परमाणु बम्ब बनाने के लिए 235U के क्रान्तिक द्रव्यमान (Critical mass) की आवश्यकता थी (इससे कम द्रव्यमान बिना विस्फोट सम्भव नहीं था) इसकी उपलब्धि में गहन कठिनाइयाँ थीं, लेकिन उनका हल निकाला गया तथा दो बम्ब बनाने के लिए पर्याप्त द्रव्यमान उपलब्ध हुआ। 16 जुलाई 1945 को न्यू मैक्सिको में परमाणु बम्ब का परीक्षण हुआ तथा 6 अगस्त, 1945 को जापान के नगर हीरोशिमा और 9 अगस्त, 1945 को नागासाकी के ऊपर परमाणु बम्ब गिराए गए, जिसमें लाखों व्यक्ति मारे गए। जापान के आत्मसमर्पण के पश्चात द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त हुआ। यह एक भयंकर त्रासदी है कि परमाणु युग का आविर्भाव एक नृशंस जनसंहार द्वारा हुआ।

यूनीकोड से फोनीकोड : श्रुति क्रांति की ओर

ओम विकास

विषय बोधक शब्द : यूनीकोड, फोनीकोड, श्रुति क्रांति, पाणिनी टेबल

भारतीय भाषाएं ध्वन्यात्मक (Phonetic) हैं। सभी भारतीय भाषाओं के लिए वर्णक्रम साम्य ISCII राष्ट्रीय कोड बनाया गया है। इस 8-बिट कोड में अंग्रेजी और एक भारतीय भाषा समाहित थी और भाषा बदल ALT कुंजी से। लगभग 15 बड़ी IT कंपनियों के संयुक्त प्रयास से विश्व भाषाओं के लिए 16 बिट यूनीकोड कोड बनाया गया। इसमें भाषा-बदल की जरूरत ही नहीं। लेकिन यह लिपि पर आधारित है, जो-जो रूपिम आकृतियां अलग से प्रयोग में आती हैं उन्हें कोड में जगह दी गई है। 1991 में 9 कंपनियों ने यूनीकोड कंसोर्शियम बनाया| 2009 में 11 पूर्ण सदस्य, 4 संस्थागत, 27 एसोशिएट सदस्य हैं। भारत सरकार का सूचना प्रौद्योगिकी विभाग 2000 में सदस्य बना।

यूनीकोड (UNICODE) में IPA (इंटरनेशन फोनेटिक एल्फावेट) के संप्रतीक अलग-अलग पेजों में है, किसी विशेष क्रम में नहीं है। पर्याप्त भी नहीं हैं। इसलिए प्रस्तावित है फोनीकोड (Phonicode)। इसकी मूल प्रेरणा ध्वन्यात्मक नागरी लिपि से मिली। ''जैसा सुनो वैसा लिखो'', ''जैसा लिखा वैसा बोला'' सिद्धांत नागरी लेखन में है। ध्वनि उच्चारण में उच्चारण का स्थान और उच्चारण की विधि मुख्य हैं। उच्चारण के स्थान (Place of articulation) (P) के अनुसार कंठ्य, तालव्य, मूर्धन्य, दन्त्य, ओष्ठ्य 5 ध्वनि प्रकार माने गए हैं।

उच्चारण की विधि (Manner of articulation) (M) के अनुसार गले से वायु और विवर फैलाव के कम-अधिक होने के आधार पर अथवा नाक से वायु-नि:सरण के अनुसार 6 ध्वनि प्रकार माने गए- [(अल्प प्राण - अघोष) / (अप्र – अघ)], [(महाप्राण – अघोष) / (मप्र – अघ)], [(अल्पप्राण - घोष) / (अप्र – घ)], [(महाप्राण - घोष) / मप्र – घ)] , नासिक्य, अलिजिह्वा। इन ध्वनियों को व्यंजन कहा गया। व्यंजनों को स्वर ध्वनियों से मोड्युलेट कर सकते हैं। उच्चारण स्थान के आधार पर 5 प्रकार की स्वर ध्वनियां हैं। स्वर ध्वनियां ह्स्व, दीर्घ हो सकती हैं। स्वर ध्वनियों परस्पर योग से व्युत्पन्न स्वर ध्वनियां 4 + 4 बनेंगी। 'अ' की स्वर ध्वनि को आदि स्वर और 'उ' की स्वर ध्वनि को मध्य स्वर और 'म' की व्यंजन ध्वनि को व्यंजनांत मानें तो (अ – उ - म) ध्वनि संयोग सभी ध्वनियों का द्योतक है, अर्थगत होने पर सभी संकल्पनाओं (Concepts) का। पाणिनी ने स्वर और व्यंजन समूहों को उच्चारण स्थान और विधि के अनुसार अलग-अलग वर्गीकृत किया है। ध्वन्यात्मक नागरी वर्णमाला को पाणिनी सारणी (Panini Table) में दिखा सकते हैं। जिस प्रकार रसायन विज्ञान में मेंडलीफ टेबल परमाणु क्रम को दर्शाती है जिससे रासायनिक यौगिक क्रियाओं को समझना आसान होता है, उसी प्रकार ध्वनि यौगिकों को पाणिनी टेबल से समझना आसान होगा। वर्णीकरण से अन्य संभावित ध्वनियों को जोड़ना भी आसान है।

व्यंजन के तीन उच्चारण भेद मान लें जिनमें अंतर समझना मानव कानों से तीन संभव हैं। इसी प्रकार मूल स्वर और व्युत्पन्न स्वर (ए, ओ) के तीन उच्चारण भेद अल्प, ह्स्व, दीर्घ मान सकते हैं, इन्हें सुनकर अंतर समझ सकते हैं। संयुक्त 'स्वर + अ' व्युत्पन्न ध्वनियां व्यंजन की भांति हैं। इस प्रकार पहचाने जाने वाली स्वनिम/अक्षर ध्वनियों को नागरी लिपि के रूपिमों से प्रदर्शित कर सकते हैं।

अल्प नासिक्य ध्वनि को अनुस्वार ं का रूपिम और अल्प अलिजिह्वा ध्वनि को विसर्ग ः का रूपिम दिया गया है। इन्हें स्वर श्रेणी में रखा गया है। स्वनिम – रूपिम का 1:1 (एक प्रति एक) निरूपण नागरी लिपि की विशेषता है। स्वर-स्वर, व्यंजन-स्वर, व्यंजन-व्यंजन - स्वर संयोजन से जो स्वतंत्र ध्वनियां व्युत्पन्न होती हैं, उन्हें अक्षर (Syllable) कहते हैं। अक्षर का अंत किसी स्वर से होता है। यह स्वर तीन रूपों में हो सकता — स्वर, (स्वर-अनुस्वार), (स्वर-विसर्ग)। हलन्त को व्यंजन के साथ स्वर हीन योग मान सकते हैं। अक्षरांत को नए रूपिम मात्रा से दिखाते हैं। व्यंजन को हलन्त के साथ दिखाते हैं, जैसे – क्, ग्, च्, ... म् ... ह् ... इन्हें शुद्ध व्यंजन भी कह सकते हैं।

वर्ण = < स्वर, व्यंजन >

अक्षर = < स्वर, व्यंजन * स्वर>

डॉ ओम विकास, C-15, तरंग अपार्टमेंट, 19 आई. पी. एक्सटेंशन, दिल्ली – 110092

ई-मेल - dr.omvikas@gmail.com । मोबाइल - +91-9868404129

पाणिनी सारणी (Panini Table)

P = (P1,P2,P3,P4,P5), M = (M1,M2,M3,M4,M5,M6)

		व्यंजन						स्वर					स्वरांत
		अप्र-अघ	मप्र-अघ	अप्र-घ	मप्र-घ	नासिक्य	अलि जिह्वा	व्युत्पन्न	व्युत्पन्न	व्युत्पन्न	मूल	मूल	
		M1	M2	M3	M4	M5	M6	व्यंजन स्वर	दीर्ध	ह्रस्व	ह्रस्व	दीर्ध	मात्रा
कंठ	P1	क	ख	ग	घ	ङ	ह	-	-	-	अ	आ	- ा
तालु	P2	च	छ	ज	झ	ञ	श	य (इ+अ)	ऐ	ए (अ+इ)	इ	ई	ि ी
मूर्ध	P3	ट	ट	ड	ढ	ण	ष	र (ऋ+अ)	-	-	ऋ	ॠ	ृ ॄ
दंत	P4	त	थ	द	ध	न	स	ल (लृ+अ)	-	-	लृ	लॄ	- -
ओष्ठ	P5	प	फ	ब	भ	म	-	व (उ+अ)	औ	ओ (अ+उ)	उ	ऊ	ु ू ो ौ

A* = <A/AA/AAA/…> पुनरावृति दर्शाता है
स्वर = < मूल स्वर (अल्प, ह्रस्व, दीर्घ),व्युत्पन्न स्वर (अल्प, ह्रस्व, दीर्घ) >
अकारांत व्यंजन = <क ....म, ...ह, य....व>
संयुक्ताक्षर = < क्क, क्ष, ज्ञ, प्र, श्र ......>
स्वरांत/मात्रा = < ा , ि ... ु ौ ं ः >
(ह्रस्व) मूल स्वर = < अ, इ, उ, ऋ, लृ>
अल्प स्वर = < अँ, एँ ऑं ..... >
दीर्घ स्वर= < आ, ई, ऊ, ए, आ>
व्युत्पन्न स्वर = < ए, ऐ, ओ, औ> ……

ध्वनियों को और गहराई से भेद करके निरूपण हेतु अलग-अलग रूपिम संप्रतीक भी दिए जा सकते हैं। संस्कृत में यह भेद किया जाता है, जिससे उच्चारण शुद्ध रहे।

इन ध्वनियों को कोडित करने के लिए व्यंजनों के लिए
(25+4+4) x 3 = 87 $\Rightarrow$ 90 कोड प्वाइंट
स्वरों के लिए
(5+1) x 3 + 2 = 20 कोड प्वाइंट

कोडन सुविधा एवं व्यावहारिकता की दृष्टि से व्यंजन भेद दो प्रकार के ही लेते हैं, तो
(व्यंजन-स्वर) अक्षर = (29 x 2) x 20 = 1160
(द्वि व्यंजन-स्वर) अक्षर = 2 x [(29 x 29) x 20] = 33640
इनमें से लगभग 10% अर्थात् 3400 व्यावहारिक होंगे।
(त्रि व्यंजन-स्वर) अक्षर = (29 x 29 x 29) x 20 = 487780
इनमें से लगभग 0.1% अर्थात् 500 व्यावहारिक होंगे = 500

इस प्रकार 1160 + 90 + 20 = 1270 सामान्य अक्षर और 3400 + 500 = 3900 संयुक्ताक्षर ध्वनियों और लगभग 500 भावात्मक (emotional) विशिष्ट ध्वनियों को भी फोनीकोड में कोडित कर सकते हैं। विशिष्ट संप्रतीकों को फोनीकोड में देख सकते हैं। फोनीकोड से यूनीकोड में परिवर्तित कर टैक्स्ट प्रिंट कर सकते हैं। स्पीच टू टैक्स्ट। यूनीकोड से फोनीकोड में परिवर्तित करके टैक्स्ट से स्पीच तैयार कर सकते हैं। फोनीकोड के हर कोड प्वाइंट के लिए स्पीच वेब फार्म संग्रहीत रहेगी। इस प्रकार नेचुरल (स्वाभाविक) स्पीच बनाने में आसानी होगी। स्वर विज्ञानी, भाषाविद् और कंप्यूटर स्पीच विशेषज्ञ की टीम फोनीकोड का मानक तैयार कर सकते हैं। भारतीय भाषाओं के लिए यह बहुत उपयोगी और आसान होगा।

स्पीच से स्पीच अनुवाद में फोनीकोड का प्रयोग उपयोगी होगा। फोनीकोड से यूनीकोड में बिना कन्वर्ट किए भी कंटेट स्टोर कर सकते हैं, इसमें मेमोरी भी कम लगेगी। 16-बिट कोड सभी भाषाओं के लिए उपयुक्त होगा। अक्षर (syllable) कोडन होने से मेमोरी की आवश्यकता अनुमानत: एक तिहाई हो जाएगी। प्रोसेसिंग स्पीड भी बढ़ जाएगी। 19 वीं सदी में औद्यौगिक क्रांति में मशीनीकरण से उत्पादकता बढ़ी। 1930 के दशक से इलेक्ट्रोनिक संचार और 1940 के दशक से कम्प्यूटर के आविष्कार से सूचना क्रांति का सूत्रपात हुआ । मानव – मशीन के बीच संवाद मुख्यत: की-बोर्ड के माध्यम से होता रहा है। दो दशकों से प्रयास किए जा रहे हैं कि मानव–बोल मशीन समझ ले। यूनीकोड से विश्वभाषाओं को एक साथ रखा जा सका, फोनीकोड से मशीन मानव-बोल समझ सकेगी और मानव जैसा बोल सकेगी। इस प्रकार **श्रुति क्रांति** का आरंभ होगा।

भारत में आधुनिक रसायनविज्ञान के जनक आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय

कृष्ण कुमार मिश्र

आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय भारत में रसायन विज्ञान के जनक माने जाते हैं। वे एक सादगीपसंद तथा महान देशभक्त वैज्ञानिक थे जिन्होंने रसायन प्रौद्योगिकी में राष्ट्र के स्वावलंबन हेतु स्तुत्य प्रयास किए। वर्ष 2011 को संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा अंतरराष्ट्रीय रसायन वर्ष के रूप में मनाया जा रहा है। भारत के लिए इसका महत्त्व इसलिए और बढ़ जाता है क्योंकि यह वर्ष एक मनीषी तथा महान भारतीय रसायनविज्ञानी आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय के जन्म का 150वाँ वर्ष भी है। सही मायनों में आचार्य राय भारत में वैज्ञानिक तथा औद्योगिक पुनर्जागरण के स्तम्भ थे। वे शैक्षिक सुधारों, औद्योगिक विकास, रोजगार सृजन, गरीबी उन्मूलन, आर्थिक आजादी तथा देश में राजनीतिक उन्नति, इन सभी के लिए फिक्रमन्द थे। उनके सोच का दायरा बहुत व्यापक था। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में आजादी की लड़ाई के साथ साथ देश में ज्ञान-विज्ञान की भी एक नई लहर उठी थी। इस दौरान अनेक मूर्धन्य वैज्ञानिकों ने जन्म लिया। इसमें जगदीश चंद्र बसु, प्रफुल्ल चन्द्र राय, श्रीनिवास रामानुजन और चन्द्रशेखर वेंकटरमन जैसे महान वैज्ञानिकों का नाम लिया जा सकता है। इन्होंने देश की पराधीनता के बावजूद अपनी लगन तथा निष्ठा से विज्ञान में उस ऊँचाई को छुआ जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती थी। ये आधुनिक भारत की पहली पीढ़ी के वैज्ञानिक थे जिनके कार्यों और आदर्शों से भारतीय विज्ञान को एक नई दिशा मिली। इन वैज्ञानिकों में आचार्य प्रफुल्ल चंद्र राय का नाम बड़े गर्व से लिया जाता है। वे वैज्ञानिक होने के साथ-साथ एक महान देशभक्त भी थे। वास्तव में वे भारतीय ऋषि परम्परा के प्रतीक थे। इनका जन्म 2 अगस्त, 1861 ई. में जैसोर जिले के ररौली गाँव में हुआ था। यह स्थान अब बांगलादेश के खुलना जिले में पड़ता है। उनके पिता हरिश्चंद्र राय इस गाँव के प्रतिष्ठित जमींदार थे। वे प्रगतिशील तथा खुले दिमाग के व्यक्ति थे। आचार्य राय की माँ भुवनमोहिनी देवी भी एक प्रखर चेतना-सम्पन्न महिला थीं। जाहिर है, प्रफुल्ल पर इनका प्रभाव पड़ा था।

आचार्य राय के पिता का अपना पुस्तकालय था। उनका झुकाव अंग्रेजी शिक्षा की ओर था। इसलिए उन्होंने अपने गाँव में एक मॉडल स्कूल की स्थापना की थी जिसमें प्रफुल्ल ने प्राथमिक शिक्षा पाई। बाद में उन्होंने अल्बर्ट स्कूल में दाखिला लिया। सन 1871 में प्रफुल्ल ने अपने बड़े भाई नलिनीकांत के साथ डेविड हेयर के स्कूल में प्रवेश लिया। डेविड हेयर खुद शिक्षित नहीं थे परंतु उन्होंने बंगाल में पश्चिमी शिक्षा के प्रसार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। राय ने अपनी आत्मकथा में जिक्र किया है कि किस तरह हेयर स्कूल में उनके सहपाठी उनकी खिल्ली उड़ाया करते थे। छात्र उन्हें 'बंगाल' उपनाम से चिढ़ाया करते थे। राय उस स्कूल में ज्यादा दिन नहीं पढ़ सके। बीमारी के कारण उन्हें न सिर्फ स्कूल छोड़ना पड़ा बल्कि अपनी नियमित पढ़ाई भी छोड़नी पड़ी। लेकिन उस दौरान उन्होंने अंग्रेजी साहित्य को उत्कृष्ट पुस्तकों तथा बांग्ला की ऐतिहासिक और साहित्यिक रचनाओं का गहन अध्ययन किया।

आचार्य राय की अध्ययन में शुरू से ही बड़ी रुचि थी। वे बारह साल की उम्र में ही चार बजे सुबह उठ जाते थे। पाठ्य-पुस्तकों के अलावा वे इतिहास तथा जीवनियों में अधिक रुचि रखते थे। 'चैम्बर्स बायोग्राफी' उन्होंने कई बार पढ़ी थी। वे सर डब्ल्यू. एम. जोन्स, जॉन लेडेन और उनकी भाषायी उपलब्धियों, तथा फ्रैंकलिन के जीवन से काफी प्रभावित थे। सन् 1879 में उन्होंने दसवीं की परीक्षा उत्तीर्ण की। फिर आगे की पढ़ाई मेट्रोपोलिटन कॉलेज (अब विद्यासागर कॉलेज) में शुरू की। यह एक राष्ट्रीय शिक्षण संस्था थी तथा यहाँ फीस भी कम थी। परन्तु वहाँ दाखिला उन्होंने सिर्फ आर्थिक कारणों से नहीं लिया था बल्कि उस समय पूजनीय माने जाने वाले सुरेन्द्रनाथ बनर्जी वहाँ अंग्रेजी गद्य को प्रोफेसर थे और प्रशांत कुमार लाहिड़ी वहाँ अंग्रेजी कविता पढ़ाते थे। उस समय रसायन विज्ञान ग्यारहवीं कक्षा का एक अनिवार्य विषय था। वहीं पर पेडलर महाशय की उत्कृष्ठ प्रयोगात्मक क्षमता देखकर धीरे-धीरे वे रसायन विज्ञान की ओर उन्मुख हुए। अब प्रफुल्ल चन्द्र राय ने रसायन विज्ञान को अपना मुख्य विषय बनाने का निर्णय कर लिया था। पास में प्रेसिडेंसी कॉलेज में विज्ञान की पढ़ाई का अच्छा इंतजाम था इसलिए वह बाहरी छात्र के रूप में वहाँ भी जाने लगे।

उसी समय प्रफुल्ल चन्द्र के मन में गिलक्राइस्ट छात्रवृत्ति के इम्तहान में बैठने की इच्छा जगी। यह इम्तहान लंदन विश्वविद्यालय की मैट्रिक परीक्षा के बराबर माना जाता था। इस इम्तहान में लैटिन या

*डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र, वैज्ञानिक (रीडर-एफ) होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान मानखुर्द, मुंबई-400088, मो. 9867210755, ईमेल : kkm@hbcse.tifr.res.in

ग्रीक तथा जर्मन भाषाओं का ज्ञान होना जरूरी था। अपने भाषा-ज्ञान को आजमाने का प्रफुल्ल के लिए यह अच्छा अवसर था। इस इम्तहान में सफल होने पर उन्हें छात्रवृत्ति मिल जाती और आगे के अध्ययन के लिए वह इंग्लैंड जा सकते थे। आखिर अपनी लगन एवं मेहनत से वह इस परीक्षा में कामयाब रहे। इस प्रकार वे इंग्लैंड के लिए रवाना हो गए। नया देश, नए रीति-रिवाज; पर प्रफुल्लचंद्र इन सबसे जरा भी चिंतित नहीं हुए। अंग्रेजों की नकल उतारना उन्हें पसन्द नहीं था, उन्होंने चोगा और चपकन बनवाई और इसी वेश में इंग्लैंड गए। उस समय वहाँ लंदन में जगदीशचन्द्र बसु अध्ययन कर रहे थे। राय और बसु में परस्पर मित्रता हो गई।

प्रफुल्ल चन्द्र राय को एडिनबरा विश्वविद्यालय में अध्ययन करना था जो विज्ञान की पढ़ाई के लिए मशहूर था। वर्ष 1885 में उन्होंने पीएच.डी. का शोधकार्य पूरा किया। तदनंतर 1887 में "ताम्र और मैग्नीशियम समूह के 'कॉन्जुगेटेड' सल्फेटों के बारे में किए गए उनके कार्यों को मान्यता देते हुए एडिनबरा विश्वविद्यालय ने उन्हें डी.एस-सी. की उपाधि प्रदान की। उनके उत्कृष्ट कार्यों के लिए उन्हें एक साल की अध्योतावृत्ति मिली तथा एडिनबरा विश्वविद्यालय की रसायन सोसायटी ने उनको अपना उपाध्यक्ष चुना। तदोपरान्त वे छह साल बाद भारत वापस आए। उनका उद्देश्य रसायन विज्ञान में अपना शोधकार्य जारी रखना था। अगस्त 1888 से जून 1889 के बीच लगभग एक साल तक डॉ. को नौकरी नहीं मिली थी। यह समय उन्होंने कलकत्ते में बसु के घर पर व्यतीत किया। इस दौरान खाली रहने पर उन्होंने रसायनविज्ञान तथा वनस्पतिविज्ञान की पुस्तकों का अध्ययन किया और रॉक्सबोर्ग की 'फ्लोरा इंडिका' और हॉकर की 'जेनेरा प्लाण्टेरम' की सहायता से कई पेड़-पौधों की प्रजातियों को पहचाना एवं संग्रहीत किया। उन्हें जुलाई 1889 में प्रेसिडेंसी कॉलेज में 250 रुपए मासिक वेतन पर रसायनविज्ञान के सहायक प्रोफेसर के पद पर नियुक्त किया गया। यहीं से उनके जीवन का एक नया अध्याय शुरू हुआ। सन् 1911 में वे प्रोफेसर बने। उसी वर्ष ब्रिटिश सरकार ने उन्हें 'नाइट' की उपाधि से सम्मानित किया। सन् 1916 में वे प्रेसिडेंसी कॉलेज से रसायन विज्ञान के विभागाध्यक्ष के पद से सेवानिवृत्त हुए। फिर 1916 से 1936 तक उसी जगह एमेरिटस प्रोफेसर के तौर पर कार्यरत रहे। सन् 1933 में काशी हिंदू विश्वविद्यालय के संस्थापक तथा रेक्टर पं. मदन मोहन मालवीय ने आचार्य राय को डी.एस.सी. की मानद उपाधि से विभूषित किया। वे देश-विदेश के अनेक विज्ञान संगठनों के सदस्य रहे।

एक दिन आचार्य राय अपनी प्रयोगशाल में पारे और तेजाब से प्रयोग कर रहे थे। इससे संयोगवश मरक्यूरस नाइट्राइट (Hg_2No_2) यौगिक बन गया। वास्तव में वे मरक्यूरिक नाइट्रेट (Hg_2No_3) बनाना चाहते थे जिससे वे माध्यमिक उत्पाद के तौर पर कैलोमल (Hg_2cl_2) पदार्थ बनता है। वास्तव में मरक्यूरस नाइट्राइट की खोज ने आचार्य राय के जीवन में एक नए अध्याय की शुरुआत की। एक अन्य अहम खोज जो आचार्य ने की, वह थी अमोनियम नाइट्राइट अस्थायी होता है तथा इसका तेजी से तापीय विघटन होता है। राय ने अपने इन निष्कर्षों को फिर से लंदन की रॉयल केमिकल सोसायटी में प्रस्तुत किया।

जैसा कि हम जानते हैं, विज्ञान और उद्योगधंधों का परस्पर गहरा संबंध होता है। उस समय हमारे देश का कच्चा माल सस्ती दरों पर इंग्लैंड जाता था। वहाँ से तैयार वस्तुएँ हमारे देश में आती थीं और ऊँची दामों पर बेची जाती थीं। इस समस्या के निराकरण के उद्देश्य से डॉ. राय ने स्वदेशी उद्योग की नींव डाली। उन्होंने 1892 में अपने घर में ही एक छोटा-सा कारखाना निर्मित किया। उनका मानना था कि इससे बेरोजगार युवकों को मदद मिलेगी। इसके लिए उन्हें कठिन परिश्रम करना पड़ा। वे हर दिन कॉलेज से शाम तक लौटते, फिर कारखाने के काम में लग जाते तथा यह सुनिश्चित करते कि पहले के ऑर्डर पूरे हुए कि नहीं। डॉ. राय को इस कार्य में थकान के बावजूद आनंद आता था। उन्होंने एक लघु उद्योग के रूप में देसी सामग्री की मदद से औषधियों का निर्माण शुरू किया। बाद में इसने एक बड़े कारखाने का स्वरूप ग्रहण किया जो आज "बंगाल केमिकल्स एंड फार्मास्यूटिकल वर्क्स" के नाम से सुप्रसिद्ध है। उनके द्वारा स्थापित स्वदेशी उद्योगों में गंधक से तेजाब बनाने का कारखाना, कलकत्ता पॉटरी वर्क्स, बंगाल एनामेल वर्क्स, तथा स्टीम नेविगेशन, प्रमुख हैं।

डॉ. राय को ग्राम्य जीवन बहुत आकर्षित करता था। वे अक्सर ग्रामीणों से उनका सुख-दुःख, हालचाल लिया करते थे। वे अपनी माँ के भंडारे से अच्छी-अच्छी खाद्यसामग्री ले जाकर ग्रामीणों में बाँट देते थे। सन् 1922 के बंगाल के अकाल के दौरान राय की भूमिका अविस्मरणीय है। 'मैनचेस्टर गार्डियन' के एक संवाददाता ने लिखा थाः "इन परिस्थितियों में रसायनविज्ञान के एक प्रोफेसर पी.सी. राय सामने आए और उन्होंने सरकार की चूक को सुधारने के लिए देशवासियों का आह्वान किया। उनके इस आह्वान को काफी उत्साहजनक प्रतिसाद मिला। बंगाल की जनता ने एक महीने में ही तीन लाख रुपए की मदद की। धनाढ्य परिवार की महिलाओं ने सिल्क के वस्त्र एवं गहने तक दान कर दिए। सैकड़ों युवाओं ने गाँवों में लोगों को सहायता सामग्री वितरित की। डॉ. राय की अपील का इतना उत्साहजनक प्रत्युत्तर मिलने का एक कारण तो बंगाल की जनता के मन में मौजूद विदेशी सरकार को धिक्कारने की इच्छा थी। इसका आंशिक कारण पीड़ितों के प्रति उपजी स्वाभाविक सहानुभूति थी, पर काफी हद तक उसका कारण पी. सी. राय का असाधारण व्यक्तित्व एवं उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा थी। वह अच्छे शिक्षक के साथ एक सफल संगठनकर्ता भी थे।

आचार्य राय ने स्वतन्त्रता आन्दोलन में भी सक्रिय भागीदारी निभाई। गोपाल कृष्ण गोखले से लेकर गाँधी जी तक से उनका मिलना-जुलना था। कलकत्ता में गांधी जी की पहली सभा कराने का

श्रेय डॉ. राय को ही जाता है। राय एक सच्चे देशभक्त थे उनका कहना था"विज्ञान प्रतीक्षा कर सकता है, पर स्वराज नहीं।" वह स्वतंत्रता आन्दोलन में एक सक्रिय भागीदार थे। उन्होंने असहयोग आन्दोलन के दौरान भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के रचनात्मक कार्यों में मुक्तहस्त आर्थिक सहायता दी। उन्होंने अपने एक भाषण में कहा था"मैं रसायनशाला का प्राणी हूँ। मगर ऐसे भी मौके आते हैं जब वक्त का तकाजा होता है कि टेस्ट-ट्यूब छोड़कर देश की पुकार सुनी जाए।" लेकिन अफसोस! डॉ. राय देश को स्वतंत्र होते अपनी आँखों से नहीं देख सके।

शोध संबंधी जर्नलों में राय के लगभग 200 परचे प्रकाशित हुए। इसके अलावा उन्होंने कई दुर्लभ भारतीय खनिजों को सूचीबद्ध किया। उनका उद्देश्य मेंडलीफ की आवर्त-सारिणी में छूटे हुए तत्त्वों को खोजना था। उनका योगदान सिर्फ रसायन विज्ञान सम्बन्धी खोजों तथा लेखों तक सीमित नहीं है। उन्होंने अनेक युवकों को रसायन विज्ञान की तरफ प्रेरित किया। डॉ. राय ने एक और महत्त्वपूर्ण काम किया। उन्होंने दो खंडों में 'हिस्ट्री ऑफ हिन्दू केमिस्ट्री' नामक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा। इससे दुनिया को पहली बार यह जानकारी मिली कि प्राचीन भारत में रसायन विज्ञान कितना समुन्नत था। इसका प्रथम खण्ड सन् 1902 में प्रकाशित हुआ तथा द्वितीय खण्ड 1908 में। इन कृतियों को रसायनविज्ञान के एक अनूठे अवदान के रूप में माना जाता है।

आचार्य राय ने बांग्ला तथा अंग्रेजी, दोनों भाषाओं में लेखन किया। सन् 1893 में उन्होंने 'सिम्पल जुआलजी' नामक पुस्तक लिखी जिसके लिए उन्होंने जीवविज्ञान की मानक पुस्तकें पढ़ीं, तथा चिड़ियाघरों और संग्रहालयों का स्वयं दौरा किया। उन्होंने 'बासुमति', 'भारतवर्ष', 'बंगबानी', 'प्रवासी', 'आनंदबाजार पत्रिका' और 'मानसी' जैसी पत्रिकाओं में बहुत सारे लेख लिखे। ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने अपनी आय का 90% दान कर दिया। सन् 1922 में उन्होंने महान भारतीय कीमियागार नागार्जुन के नाम पर वार्षिक पुरस्कार शुरू करने के लिए दस हजार रुपए दिए। सन् 1936 में आशुतोष मुखर्जी के नाम पर भी एक शोध-पुरस्कार शुरू करने के लिए उन्होंने दस हजार का अनुदान दिया। कलकत्ता विश्वविद्यालय को उसके रसायनविज्ञान के विस्तार तथा विकास के लिए उन्होंने 1,80,000 रुपए का अनुदान दिया। ऐसे उदारमना विज्ञानी का 16 जून, 1944 को उनका देहावसान हो गया।

उनके बारे में यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ साइंस, लंदन के प्रोफेसर एफ.जी. डोनान ने लिखा थाः "सर पी.सी. राय जीवन भर केवल एक संकीर्ण दायरे में बँधे प्रयोगशाला-विशेषज्ञ बन कर नहीं रहे। अपने देश की तरक्की तथा आत्मनिर्भरता हमेशा उनके आदर्श रहे। उन्होंने अपने लिए कुछ नहीं चाहा, तथा सादगी एवं मितव्ययिता का कठोर जीवन जीया। राष्ट्र एवं समाज सेवा उनके लिए सर्वोपरि रहे। वे भारतीय विज्ञान के प्रणेता थे।" वे कॉलेज परिसर में ही एक कमरे में रहते थे। अपने कपड़े खुद ही साफ करते, तथा जूते स्वयं पॉलिश करते। उन्होंने सन्यस्त तथा व्रती का जीवन बिताया। उन्होंने परिवार नहीं बसाया, तथा आजीवन अविवाहित रहे। सांसारिक बंधनों तथा मोहमाया एवं परिग्रह से अपने को कोसों दूर रखा। अपने देहावसान से पूर्व आचार्य प्रफुल्ल चन्द्र राय ने अपनी समस्त संपत्ति सामाजिक कार्यों के लिए दान कर दी थी। ऐसा था ऋषितुल्य एवं प्रेरणादायी उनका व्यक्तित्व एवं कृतित्व। सचमुच, वे भारतीय विज्ञानाकाश के देदीप्यमान नक्षत्र हैं।

नाइट्रिक ऑक्साइड : एक संक्षिप्त चर्चा

कुमार आशुतोष

नाइट्रिअ ॉक्साइड (हम आगे इसे संक्षेप म. ना.आ. लिख.गे) एक जहरीली गैस है। इसकी शोहरत महज सिगरेट और मोटर गाड़ियों के धुएं या और कई प्राकृतिक प्रतिक्रियाओं से पैदा होकर वातावरण को प्रदूषित करने वाली एक प्रमुख जिम्मेदार विषैली गैस के रूप म. जानी जाती है। अच्छा, अब इस बुरी गैस की अप्रिय चर्चा को यहीं छोड़ कर कुछ दूसरी मनोरंजक बात. करते हैं।

जैसा कि सभी जानते हैं कि जीने के लिए प्रत्येक कोषाणुओं (Cells) को ऑक्सीजन तथा अन्य पोषण तत्वों की आवश्यकता होती है जो स्तनपायी जीवों (Mammals) म., जिनम. हम मनुष्य भी शामिल हैं, के हर अंग तक रक्त के द्वारा पहुंचाई जाती हैद्य रक्त को ऊपर चढ़ाने के लिए एक कारगर दबाव (Appropriate Pressure) हमारा हृदय अपनी हर धड़कन के साथ पैदा करता है। अगर हमारा मस्तिष्क हृदय से लगभग चालीस स.टीमीटर ऊपर है तब वहाँ तक चढ़ा पाने के लिए हमारे हृदय को उतनी ताकत लगानी पड़ती है जो उतना दबाव पैदा कर सके। यही हमारा रक्तचाप (Blood Pressure) है। एक बार जब किन्हीं साढ़े छह फीट लम्बे महाशय से मेरा साबका पड़ा तो मैंने सोचा कि अगर उन का रक्तचाप वही है जो मेरा तो आखिर उनके मस्तिष्क तक, जो मेरे माथे से लगभग एक फुट और ऊपर है, रक्त पहुंचता कैसे है? मुझे लगता था कि जरूर ही उनके दिमाग तक आक्सीजन कम पहुँचता होगा फलतः वे अवश्य ही मन्दबुद्धि होंगे। पर कैसा ताज्जुब था कि वे सज्जन तो मुझसे ज्यादा ही कुशाग्र बुद्धि थे, जब कि उनका रक्तचाप वही था जो मेरा। कुछ ऐसी ही उलझन चिड़ियाघरों म. जिराफ को देख कर होती थी। जिराफ का सर उसके हृदय से दस फीट तक ऊपर होता है और वहाँ तक खून पहुंचाने के लिए उसके हृदय को कम से कम दस फीट का रक्तचाप पैदा करना पड़ता है, और जब वह पानी पीने को झुकता है तो उसका सर हृदय से करीबन आठ फीट नीचे हो जाता है। अगर हम इस आठ फीट के भरे खून के वजन को नज़रअंदाज कर भी द. तो बिचारे जिराफ को उस दस फीट के रक्तचाप को तो झेलना पड़ता ही होगा। इस भीषण दबाव से तो उस का दिमाग फट ही जाना चाहिए। पर ये तमाम जिराफ तो मजे म. ऊँची-ऊँची पत्तियाँ भी खाते हैं और बिला हिचक झीलों म. सर झुका कर पानी भी पीते हैं और ना किसी का सर फटता है और ना ही किसी जिराफ को पत्तियाँ खाकर मूर्च्छित ही होते देखा गया है। यह कैसे संभव है?

इस गुत्थी को सुलझाने के लिए हम. उन नलिकाओं (Blood Vessels), जिनके द्वारा खून हर अवयव तक पहुँचता है, की जैववृतियों (Physiology) पर नज़र डालनी होगी। ये रक्त नलिकाएँ एक जीवित अंग हैं जिनकी अंदरूनी परत (Endothelium) का चयापचय (Metabolism) एक बहुत ही सक्रिय प्रणाली है। इस अंदरूनी परत के कुछ कोष एक रस, जिसे एण्डोथेलीन (Endothelin) कहा जाता है, का स्राव करते है, जो धमनियों (arteries) को सकरा कर के उन्ह. कड़ा बनाता है। साथ ही कुछ दूसरे कोष एक अन्य रस निकालते हैं जो एण्डोथेलियम रिलैक्सिड फैक्टर (EDRF या ई. डी. आर. एफ.) के नाम से जाना जाता है। इसका काम धमनियों को चौड़ा कर उन्ह. ढीला करना होता है। एण्डोथेलीन और ई. डी. आर. एफ. के बहुत ही बारीक पारस्परिक संतुलन से हमारी धमनियों की चौड़ाई और उनका दबाव नियंत्रित होता है, जिससे शरीर के हर कोषाणु तक खून की उचित मात्रा पहुँचती रहती है, चाहे वहाँ का स्थानीय रक्त चाप कुछ भी हो।

सन 1977 म. एक भारतीय वैज्ञानिक श्री चन्द्र कुमार मित्तल ने एक चौकाने वाली खोज की। उन्होंने पाया कि धमनियों की अंदरूनी परत के कोषाणु स्वतः ना. आ. निःस्रीत करते रहते हैं और इतना ही नहीं यह ना. आ. एक दूसरे रसायन, चक्राकार गुआनिडीन मोनो फास्फेट (Cyclic GMP) को नियंत्रित करता है जिससे धमनियों का कसाव (Tone) हर बदलती परिस्थिति म. ठीक ठाक बना रहता है। फिर ईसवी सन 1987 म. दो अन्य वैज्ञानिकों, सर्वश्री इनयारों और पामर, ने साबित किया कि यह ना. आ. ही हमारा पुराना ई. डी. आर. एफ. है। इन खोजों ने ना. आ. की छ्वी ही बदल दी। फिर तो यह स्पष्ट हो गया यह विषैली गैस हमारी नसों म. अनवरत स्वतः उत्पन्न ही नहीं होती बल्कि इसका होना हमारे जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक भी है। इन खोजों को इतना महत्वपूर्ण माना गया कि इन्हीं के आधार पर हमारे परिचित श्री इनयारों के साथ दो अन्य वैज्ञानिकों, मुराद और फुर्चगोट, को 1998 म. नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया

*डॉ. कुमार आशुतोष, सीराक्यूज़, न्यू यॉर्क, ईमेल : dr.ashutosh@verizon.net

गया। गौरतलब है कि श्री मित्तल इस पुरस्कार से वंचित रहे। इस चूक कों लेकर काफी प्रश्न भी उठाये गये। नोबेल पुरस्कार समिति की अपनी परंपरा है कि वह कभी भी अपने निर्णयों पर कोई बहस नहीं करती और ना ही किसी तरह का स्पष्टीकरण देती है। फिर भी जिन्ह. इसके तौर तरीकों का जानकार माना जा सकता है उनका कहना है कि नोबेल पुरस्कार किसी एक खोज पर नहीं दिया जाता वरन इसके हकदार वे माने जाते हैं जो उस खोज कों आगे बढ़ाते हैं और उसका सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक महत्व स्थापित करते हैं द्य इस दृष्टिकोण से देखा जाये तो सच है कि श्री मित्तल 1977 के बाद दूसरे क्षेत्रों म. कार्यरत हो गए और ना. आ. के जैववृतीय प्रणाली और महत्व तथा इसकी उपयोगिता को सप्रमाण मान्यता दिलाई श्री इनयारों, मुराद और फुर्चगोट ने।

अब वक्त आ गया है कि हम ना. आ. के जैववृतीय (Physiological) कार्यकलापों का भी थोड़ा जिक्र कर ल.। स्वाभाविक है कि यह विवरण अति संक्षिप्त और सरलीकृत मात्र होगा।

ना. आ. का संयोजन (Synthesis) एक एमिनो अम्ल (Amino Acid) वाम - आर्जिनीन (L&arginine) पर हमारी रक्तनलिकाओं की अंदरूनी परत-परत म. अंतर्निहित एक प्ररस (enzyme) जिसे अवस्थित (Constitutive) ना. आ. संयोजक (ना. आ. सं. Nitric Oxide Syntheses या संक्षेप म. - Nos) कहा जाता है, की प्रतिक्रिया से संपूर्ण होता है। अवस्थित ना. आ. सं. के दो प्रकार हैं जिन्ह. ना. आ. सं.-1 (Nos 1) और ना. आ.सं.-3 (Nos 3) का नाम दिया गया है।

ना. आ. सं. -3 के प्रभाव से उत्पन्न ना. आ. एण्डोथेलीन के साथ संतुलन कर के रक्तनालिकाओं का व्यास और चाप नियंत्रित करता है। साथ ही यह धमनियों को घायल होने से और रक्त को जमने से बचाने म. भी एक अहम भूमिका निभाता है। इधर ना. आ.-1 के प्रभाव से निकला ना. आ. एक महत्वपूर्ण स्नायुसंवादक (Neurotransmitter) है।

ना. आ. सं. की एक दूसरी किस्म भी है जो रक्त नलिकाओं की अंदरूनी परत पर किसी आघात की प्रतिक्रिया से तत्क्षण निःसृत होती है और इसे उत्तेजित ना. आ. सं. (Inducible Nos) कहा जाता है। इसके प्रभाव से ना. आ. धीरे धीरे परंतु बहुत देर तक निकलता रहता है जो एक शक्तिशाली कीटाणुनाशक (Antimicrobial) है। परंतु उत्तेजित ना. आ. सं. के प्रभाव से निकला ना. आ. आंतरिक शोथ (Inflammation) को तीव्र करता है द्य इसका शारीरिक व्याधियों से लड़ने म. बहुत बड़ा योगदान है परंतु स्वछंद, अमर्यादित ना. आ. हमारे शरीर की संरचना के लिए घातक हो सकता है। इसलिए प्रकृति की कुछ ऐसी व्यवस्था है कि ना. आ. हमारे शरीर म. स्थित एक दूसरे प्ररस, फॉस्फोड़ाइएस्टरेज़ (Phosphodiesterase), के द्वारा शीघ्र विनष्ट कर दिया जाता है।

अगर पाठक क्षमा कर. तो मैं जरा अपनी बात करूं। इन पंक्तियों का लेखक पेशे से एक डॉक्टर है और स्वभावतः ही उसकी दिलचस्पी ना. आ. के व्यावहारिक उपयोग म. है। ना. आ. के आम उपयोग म. दो मुश्किल. हैं। एक तो जैववृतीय ना. आ. का कार्यकाल मात्र कुछ सेक.ड तक ही रहता है अतः इसे बीमारों को अनवरत रूप से देना पड़ता है। पर ऐसा तो थोड़े समय तक ही व्यावहारिक हो सकता है। दूसरे कि ना. आ. वायु के संपर्क म. आ कर कुछ सेक.ड म. ही एक अन्य विषैली गैस, नाइट्रोजेन डाई ऑक्साइड (No_2), म. बदल जाता है जिसका दुष्परिणाम सांघातिक भी हो सकता है। इसलिए ना. आ. का चिकित्सा म. सुरक्षित और कारगर उपयोग करने के लिए अत्यंत जटिल प्रणालियां अपनानी पड़ती हैं जिनका व्यापक व्यवहार सुलभ नहीं हो सकता। इस दिशा म. इन पंक्तियों के लेखक ने भी कुछ प्रयोग किए हैं और पाया है की एक-दो दिनों तक ना. आ. एक सरल विधि से देना संभव है और सुरक्षित भी है। अब तो यह गैस एक सप्ताह तक भी मरीजों को दी जाने लगी है पर अभी ऐसा प्रायोगिक रूप म. ही संभव हो पाया है। इनके अलावा एक और भी प्रश्न है जिसका जवाब अभी तक ठीक पता नहीं है। वह यह की जो ना. आ. गैस हम बाहर से मरीजों को देते हैं क्या उसका असर वही होगा जो की हमारी प्राकृतिक शारीरिक प्रक्रिया से उत्पन्न ना. आ. का होता है? शायद नहीं। इसलिए संभवतः ऐसी औषधियाँ ज्यादा उपयुक्त होंगी जो हमारी अंदरूनी ना. आ. को ही अधिक निरूसृत कर. या उनका कार्यकाल दीर्घतर कर.। कई फॉस्फोड़ाइएस्टरेज़ शामक (Phosphodiesterase Inhibitors) उपयोग म. लाये भी जा रहे हैं। इसके अलावा हमारा पूर्व परिचित वाम-आर्जिनीन जो ना. आ. के उत्पादन का मूल (Substrate) है और एक आवश्यक एमिनो अम्ल होने के नाते हमारे दैनिक भोजन का एक महत्वपूर्ण घटक भी है। संभवतः इसका सेवन भी ना. आ. की मात्रा बढ़ाने म. सहायक हो सकता है। इस दिशा म. खुद लेखक ने और कुछ अन्य शोधकर्ताओं ने भी अपनी शोधों म. वाम आर्जिनीन का उपयोग किया है और बिना किसी नुकसान के कुछ लाभ की संभावना भी देखी है।

इस लेख म. आधुनिक चिकित्सा म. ना. आ. के स्थान और इसके विभिन्न उपयोगों की चर्चा करना तो विषयांतर होगा। हमारा उद्देश्य यह भी नहीं। इतना कहना पर्याप्त होगा की कुछ दिनों पहले तक इस बदनाम विषैली समझी जाने वाली गैस अब एक महत्वपूर्ण जैववृतीय अणु (Molecule) मानी जाने लगी है और इसके चिकित्साशास्त्र म. उपयोग की संभावना को लेकर एक उत्साह-सा है। शायद अगले दस पंद्रह सालों म. आधुनिक चिकित्सा म. इसका सही स्थान स्थापित हो जाये। इस पूरी चर्चा पढ़ने के लिए अपने विज्ञ पाठकों को धन्यवाद देते हुए इस लेख को यहीं समाप्त करता हूँ।

संदर्भः

1. दिनेश शर्माडिसएग्रीम.ट्स ओवर मेडिसिन नोबेल प्राइज़ एअर्ड इन इंडिया - दी लान्सेट 1998 : 352 : 1449,
2. डी. कोशलैण्ड मॉलीक्यूल ऑफ दी ईअर (संपादकीय)।... साइंस 1992 : 258 : 1861,
3. एस. मोंचाडा, - दि एल आर्जिनीन - नाइट्रिक ऑक्साइड पाथवे : पैथोफिज़ियोलॉजी एण्ड फॉर्मेकौलॉजी - न्यू इंग्लैण्ड जर्नल औफ मेडिसिन 1993 : 329 : 2002-2012
4. कुमार आशुतोष, के. फड़के और अन्य - यूज ऑफ नाइट्रिक ऑक्साइड इनहेलेशन इन क्रॉनिक ऑब्सट्रक्टिव पल्मोनरी डिज़ीज़ - थोरैक्स 2000:55:1:9-113,
5. कुमार आशुतोष, फॉर्मेकौलॉजी एण्ड क्लीनिकल एप्लिकेशन्स ऑफ नाइट्रिक ऑक्साइडरू ए रिव्यू -कर.ट टॉपिक्स इन फॉर्मेकौलॉजी 2005:9:103-107,

एक नई पृथ्वी की खोज

शशांक द्विवेदी

इस ब्रह्माण्ड में जीवन के लिए सिर्फ हमारी पृथ्वी ही नहीं है बल्कि अब एक नई पृथ्वी की खोज कर ली गई है जहाँ पर जीवन संभव हो सकता है। अमेरिका की अंतरिक्ष एजेंसी नासा के केप्लर मिशन ने एक ऐसे ग्रह का पता लगाया है जो शक्ल-सूरत से पृथ्वी से मिलता-जुलता है। यहाँ जमीन है और शायद पानी भी। इस ग्रह की परिस्थितियाँ जीवन के अनुकूल हैं और खास बात यह है कि यह ग्रह अपने सूरज जैसे तारे के जीवनअनुकूल क्षेत्र में ही चक्कर काट रहा है। खगोल वैज्ञानिकों ने वैसे तो पिछले एक साल के दौरान हमारे सौरमंडल से बाहर अनेक नए ग्रहों का पता लगाया है और इनमें से कुछ ग्रहों को संभावित पृथ्वी के रूप में भी देखा गया है, लेकिन यह पहला मौका है जब किसी ग्रह में पृथ्वी जैसे गुण देखे गए हैं।

पिछले दिनों अमेरिका की अंतरिक्ष एजेंसी नासा ने सौरमंडल से बाहर पृथ्वी के समान और संभावित जीवन के लिए उपयुक्त वातावरण वाले केपलर 22बी नामक नए ग्रह की खोज की। नासा के अंतरिक्षविदों की टीम के अनुसार केपलर 22बी नामक इस नए ग्रह पर भविष्य में इंसानों का संभावित बसेरा हो सकता है। केप्लर 22बी ग्रह जिस तारे का चक्कर काट रहा है उसका नाम जी5 रखा गया है। यह लाइरा और साइग्नस तारामंडल में मौजूद है और पृथ्वी से लगभग 600 प्रकाश वर्ष दूर अपने सितारे के चारों ओर घूर्णन कर रहा केपलर-22बी हमारे ग्रह से 2 गुना 4 बड़ा है जिसके कारण इसे उन ग्रहों की श्रेणी में रखा गया है, जिन्हें सुपर-अर्थ कहा जाता है। यह ग्रह अपने सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाने में 290 दिन का समय लेता है। अनुमान लगाया गया है कि सतह के निकट इस ग्रह का तापमान 72 डिग्री या 22 सेल्सियस होगा। हालाँकि वैज्ञानिकों को यह जानकारी नहीं है कि यह ग्रह चट्टानों से भरा है या यह गैस अथवा तरल अवस्था में है। इस तारे का द्रव्यमान और अर्द्ध व्यास हमारे सूरज से कुछ कम है। इसकी वजह से इसकी चमक सूरज से 25 प्रतिशत कम है।

जीवन की संभावना वाले पृथ्वी जैसे ग्रहों की खोज में एक कदम और आगे बढ़ते हुए नासा ने कहा है कि केपलर अंतरिक्ष दूरबीन ने हमारे सौर तंत्र से बाहर एक ऐसे ग्रह की मौजूदगी की पहली बार पुष्टि की है जिस पर जीवन हो सकता है।

केपलर 22बी नामक ग्रह पर एक साल 290 दिनों का होता है। इस ग्रह को सर्वप्रथम वर्ष 2009 में देखा गया था, नासा आमेस अनुसंधान केन्द्र केपलर के प्रधान शोधकर्ता बिल बोरूची के अनुसार दो वर्षों के गहन अध्ययन के पश्चात यह निष्कर्ष निकाला गया कि केपलर--22 बी पर जीवन हेतु सभी उपयुक्त परिस्थितियाँ हैं। किसी भी ग्रह पर जीवन की संभावना होने के लिए उसका अपने मुख्य तारे से उचित दूरी होना जरूरी है ताकि वह ना ही अत्यधिक गर्म या ठंडा हो।

इस वर्ष की शुरुआत में फ्रांसीसी खगोलविदों ने पहली बार एक ऐसे ग्रह के मिलने की पुष्टि की थी जिस पर जीवन के लिए आवश्यक सभी शर्तें मौजूद थी। लेकिन पहली बार 2009 में खोजा गया केपलर-22बी पहला ऐसा ग्रह है जिसकी पुष्टि अमेरिका की अंतरिक्ष एजेंसी ने की है। पुष्टि करने का अर्थ है कि खगोलविदों ने इसे इसके सतारे के सामने से गुजरते हुए तीन बार देखा है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि खगोलविदों को यह जानकारी है कि जीवन वहाँ पाया जा रहा है। इसका अर्थ सिर्फ इतना भर है कि जीवन के पाए जाने के लिए वहाँ परिस्थितियाँ एकदम ठीक हैं। ऐसे ग्रह की दूरी सितारे से ठीक उतनी होती है, जितनी दूरी पर उस ग्रह में पानी पाया जा सके। इसके अलावा जीवन को धारण करने के लिए वहाँ सही तापमान और वातावरण भी होता है। उल्लेखनीय है कि केप्लर टेलीस्कोप 1,55,000 तारों की चमक पर निगरानी रखता है। जब पृथ्वी जैसे ग्रह चक्कर काटते हुए अपने तारे या सूरज के आगे से गुजरते हैं तो वे उसकी चमक को फीका कर देते हैं। केप्लर टेलीस्कोप तारे की चमक में आने वाले इस परिवर्तन को दर्ज कर लेता है और इस आधार पर खगोल वैज्ञानिक तारे के इर्द-गिर्द ग्रह की उपस्थिति का अनुमान लगाते हैं।

नासा आमेस अनुसंधान क्रेन्द्र में केपलर के प्रधान शोधकर्ता बिल बोरूची ने कहा, केपलर-22बी के रूप में हमें एक ऐसा ग्रह मिल गया है जिस पर सभी उपयुक्त परिस्थितियाँ हैं। उन्होंने कल कहा कि हम आश्वस्त हैं कि इस ग्रह पर जीवन की तमाम परिस्थितियाँ हैं और अगर इस पर सतह मौजूद है, तो यहाँ का तापमान इसके अनुकूल होना चाहिए। नासा ने यह भी घोषणा की है कि केपलर दूरबीन ने ऐसे

---

*शशांक द्विवेदी, सेंट मागरिट इंजीनियरिंग कॉलेज, नीमराना, अलवर, राजस्थान 301705, मो. 9001433127, ईमेल : shashank_206@rediffmail.com

1094 ग्रहों की खोज की है जिन पर जीवन हो सकता है। इससे पहले यह संख्या इसकी आधी थी। केपलर नासा का पहला ऐसा अभियान है जो हमारे जैसे सूर्य के चारों ओर चक्कर लगा रहे ग्रहों की खोज कर रहा है और इस अभियान पर 60 अरब डॉलर खर्च किए जा रहे हैं।

नासा का मिशन कैप्लर

नासा ने स्पेस ऑब्जरवेटरी कैप्लर 2007 में लांच की थी और इसका मकसद था पृथ्वी से मिलते-जुलते ऐसे नए ग्रहों की, जहाँ जिंदगी मुमकिन हो सकती है।

नासा ने मिशन कैप्लर की अब तक की खोज की तमाम जानकारियाँ सार्वजनिक कर दी हैं। स्पेस ऑब्जरवेटरी कैप्लर ने पहली बार हमारी धरती जैसा एक नया ग्रह और अपने सितारे के हैबिटेट जोन में मौजूद एक ऐसा ग्रह खोज निकाला है, जहाँ पानी तरल अवस्था में ग्रह की सतह पर मौजूद हो सकता है। मिशन कैप्लर ने अपने सितारे की परिक्रमा करते 6 ग्रहों एक ऐसा नया सौरमंडल खोजा है जिसके 5 ग्रहों का आकार हमारी धरती के जैसा ही है। इस सौरमंडल की सूरज हमारे सूर्य के मुकाबले ठंडा है और सबसे खास बात तो ये कि धरती जैसे आकार वाले इसके सभी पाँचों ग्रह अपने सितारे के हैबिटेट जोन में हैं। इस मिशन के सम्मान में नए सौरमंडल के सूरज का नाम कैप्लर-11रखा गया है। कैप्लर-11 और इसका 6 ग्रहों से भरा-पूरा और सौरमंडल हमसे 200 प्रकाश वर्ष दूर है। हमारे सौरमंडल से बाहर अब तक इतना विशाल और इतना व्यवस्थित सौर-परिवार पहले कभी नहीं खोजा गया था।

इस नई खोज के बारे में बात करते वक्त मिशन कैप्लर से जुड़े सभी वैज्ञानिक अतिरिक्त सतर्कता बरत रहे हैं। 1,50,000 सितारों से आती रोशनी और उनके सामने से किसी ग्रह के गुजरने से मंद पड़ते प्रकाश को पकड़ने में स्पेश ऑब्जरवेटरी कैप्लर ने असाधारण कुशलता का परिचय दिया है। मिशन कैप्लर ने अभी जो खोजा है उससे हमें केवल नए ग्रह के आकार के बारे में पता चलता है, इससे हमें उस ग्रह के द्रव्यमान के बारे में कुछ पता नहीं चलता। यानी खोजे गए नए ग्रहों के घनत्व और वहाँ मौजूद तत्त्वों के बारे में हमें आमतौर पर कुछ भी पता नहीं चल पाता।

नासा के एडमिनिस्ट्रेटर चार्ल्स बोल्डेन बताते हैं कि मिशन कैप्लर ने नए ग्रहों को कल्पना की उड़ान से निकाल कर उन्हें एक हकीकत में बदल दिया है। मंगलवार 1 फरवरी, 2011 को जारी किए गए नासा के डेटा के अनुसार अब हमारे सौरमंडल से बाहर खोजे जा चुके नए ग्रहों की तादाद बढ़कर 1,235 हो चुकी है। इनमें से 500 नए ग्रहों की पुष्टि तो ग्राउंड ऑब्जरवेटरीज कर चुकी हैं, बाकी की पुष्टि की दुनिया भर में फैली ऑब्जरवेटरीज से की जानी बाकी है। मिशन कैप्लर ने जिन नए ग्रहों को खोजा है उनमें से 68 नए ग्रहों का आकार करीब-करीब पृथ्वी के बराबर है, 288 नए ग्रहों का आकार पृथ्वी से तीन से पाँच गुना तक विशाल है, 662 नए ग्रह नेपच्यून जैसे हैं, 165 नए ग्रह हमारे बृहस्पति की तरह हैं और 19 नए ग्रहों का आकार हमारे सौरमंडल के सबसे विशाल ग्रह बृहस्पति से भी कहीं ज्यादा विशाल है।

54 नए ग्रह ऐसे हैं जो अपने-अपने सितारों के हैबिटेट जोन में हैं और इनमें से 5 ग्रह ऐसे हैं जिनका आकार हमारी धरती के बराबर है। हैबिटेट जोन में मौजूद शेष 49 नए ग्रहों में से कुछ सुपर-अर्थ साइज के हैं, तो कुछ हमारी धरती से दोगुने विशाल और कुछ तो बृहस्पति से भी विशाल हैं। मिशन कैप्लर से आई ये ताजा जानकारियाँ इस स्पेस ऑब्जरवेटरी के उन ऑब्जरवेशंस पर आधारित हैं जो 12 मई से 17 सितंबर, 2009 के बीच किए गए थे। इस दौरान कैप्लर ने 1,56,000 सितारों का अध्ययन किया और इस तरह हमने नई पृथ्वी की तलाश में आसमान के सौवें हिस्से को छानने की पहली कोशिश की;

नासा से एम्स रिसर्च सेंटर, कैलीफोर्निया में काम कर रहे मिशन कैप्लर के मुख्य वैज्ञानिक निरीक्षक विलियम बोरुकी कहते हैं, “हमने अपनी पहली कोशिश में ही आकाश के एक छोटे से हिस्से में इतने नए ग्रह ढूँढ निकाले, इससे पता चलता है कि हमारी आकाशगंगा में अनगिनत ग्रह अपने-अपने सितारों की परिक्रमा कर रहे हैं। हमने शून्य से शुरुआत करके पृथ्वी जैसे आकार वाले 68 नए ग्रह ढूँढ निकाले और शून्य से ही शुरुआत करके 54 ऐसे नए ग्रह खोज डाले हैं, जिनमें से कुछ की धरती पर शायद पानी अपने तरल स्वरूप में बहाता हो।”

नए सौरमंडल कैप्लर-11 के सभी 6 ग्रहों की पुष्टि दूसरी ऑब्जरवेटरीज से भी हो चुकी है और इन सबका परिक्रमा-पथ हमारे शुक्र के भी छोटा है। इस नए सौर-परिवार के पाँच ग्रहों का परिक्रमा-मार्ग तो बुध से भी छोटा है। इसके अलावा एक दूसरा सितारा जिसके सामने से इसके ग्रह को गुजरता हुआ देखा गया है, वो है कैप्लर-9। सितारे कैप्लर-9 के भी तीन ऐसे ग्रहों का पता चला है जो इसकी परिक्रमा कर रहे हैं।

नासा की एम्स लैब में काम कर रही मिशन कैप्लर की साइंस टीम के सदस्य और प्लेनेटेरी साइंटिस्ट जैक लिसौर कहते हैं, “कैपलर-9 सौरमंडल की बनावट और इसका व्यवस्थित क्रम अद्‌भुत है। इससे हमें ये पता चल सकेगा कि इसकी रचना कैसे हुई। सूरज कैप्लर-11 की परिक्रमा कर रहे सभी 6 ग्रह पथरीले भी हैं और गैसीय भी। शायद इनमें से कुछ पर पानी भी मौजूद हो। ये सभी नए ग्रह हमारे सौरमंडल से बाहर खोजे गए सबसे हल्के ग्रहों में से हैं।”

अब तक तीन ग्रह

सौरमंडल के बाहर अब तक ऐसे तीन ग्रह खोजे जा चुके हैं जहाँ भविष्य की पीढ़ियों द्वारा कॉलोनी बनाना संभव हो सकता है। इन्हें एक्सो प्लेनेट्स के नाम से जाना जाता है। मई में फ्रेंच खगोलविदों ने ग्लीजर 581 डी की पहचान की थी। यह पृथ्वी से काफी नजदीक करीब 20

प्रकाश वर्ष दूर है। इसका द्रव्यमान पृथ्वी के द्रव्यमान से छह गुना अधिक है। यह ग्रह छह ग्रहों के एक परिवार का हिस्सा है। अगस्त में स्विट्जरलैंड की एक टीम ने कहा कि एचडी 85512बी नामक एक अन्य ग्रह पर भी जीवन की संभावना हो सकती है। यह पृथ्वी से 36 प्रकाश वर्ष दूर है। इसका द्रव्यमान पृथ्वी से 3.6 गुना है।

नई खोज से आशाएँ बढ़ी

नई खोज से खगोल वैज्ञानिकों के इस विश्वास को और बल मिला है कि हमारा ब्रह्माण्ड जीवन से सराबोर है। केप्लर 22बी खोजने वाली टीम के एक सदस्य एलन बॉस का कहना है कि केप्लर मिशन हमारी आकाशगंगा में मौजूद पृथ्वी जैसे जीने लायक ग्रहों की वास्तविक संख्या का पता लगाने के काफी नजदीक पहुँच गया है। इस बीच, यूनिवर्सिटी ऑफ प्युर्टोरिको के खगोल वैज्ञानिकों ने अब तक खोजे गए 700 बाहरी ग्रहों का वर्गीकरण करना शुरू कर दिया है। इनमें ज्यादातर वर्ग हमारे बृहस्पति और नेपच्यून की तरह गैस-प्रधान हैं जो अपने तारे के बहुत समीप चक्कर काट रहे हैं लेकिन कुछ ग्रह ऐसे भी हैं जो जीवन-अनुकूल क्षेत्र में परिक्रमा कर रहे हैं। तारे से सही दूरी रखने वाले और सही आकार वाले ग्रह को ही जीवन के लिए उपयुक्त माना जा सकता है। नए वर्गीकरण के आधार पर वैज्ञानिकों ने 47 ऐसे बाहरी ग्रहों और बाहरी चंद्रमाओं की पहचान की है जो जीवन-अनुकूल हो सकते हैं। 700 बाहरी ग्रहों के अलावा केप्लर मिशन ने करीब एक हजार संभावित ग्रहों का पता लगाया है।

खाद्य पदार्थों में रंगों का बढ़ता उपयोग एवं उनके दुष्प्रभाव

शिप्रा शर्मा[1] एवं शिखा जैन[2]

रंग खाद्य पदार्थों की एक संपत्ति है जो उन्हें आकर्षक बनाता है। खाद्य पदार्थों में रंगों का उपयोग आधुनिक उपभोक्ताओं के लिए आवश्यक अंग बन चुका है। प्राचीन समय में खाद्य पदार्थों, दवाइयों, सौंदर्य प्रसाधनों में प्राकृतिक रंगो जैसे लाल मिर्च, हल्दी, खनिज स्त्रोत, केसर, तांबा आदि का प्रयोग किया जाता था। कृत्रिम रंगों का उपयोग 1900 शताब्दी की शुरुआत में किया गया तथा सदी के अंत तक विश्व बाजार में इनका उपयोग बहुतायत रूप में होने लगा। मोटे तौर पर खाद्य-रंगों को दो श्रेणियों में विभाजित किया गया हैः प्राकृतिक तथा संश्लेषित रंग। संश्लेषित रंगों को पुनः गैर-अनुमति (non-permitted) तथा अनुमति (permitted) में विभाजित किया गया है।

प्राकृतिक रंगों का उपयोग, खाद्य पदार्थों में किसी भी अनुपात में किया जा सकता है परन्तु खाद्य अपमिश्रण अधिनियम, भारत, 1954, के अनुसार संश्लेषित खाद्य रंगों का उपयोग निर्दिष्ट सीमा के भीतर कुछ ही खाद्य पदार्थों में अनुमतित है। गैर-अनुमति रंगों (non-permitted) का उपयोग किसी भी खाद्य पदार्थ में तथा किसी भी अनुपात में प्रतिबंधित है। खाद्य अपमिश्रण अधिनियम, भारत, 1954 के द्वारा वर्तमान में आठ संश्लेषित रंगों की अनुमति प्रदान की गई है। मूलतः प्रचलित ये आठ रंग हैंटेट्राजीन, सनसेट यलो, कार्मोसीन, इरिथोसीन, इंडिगो कार्मिन, ब्रिलियंट ब्ल्यू, पोनक्यू 4R तथा फास्टग्रीन है।

खान पान की आदतें आमतौर पर परम्पराओं और पारिवारिक पृष्ठभूमि से संचालित होती है और वे जीवन शैली में परिवर्तन के अधीन हैं। एकल परिवारों की बढ़ती संख्या, कामकाजी महिलाओं की संख्या में वृद्धि एवं मीडिया तथा विज्ञापनों की संख्या में होने वाली दिन-प्रतिदिन बढोत्तरी के कारण डिब्बा बंद सामग्री की माँग बढ़ रही है। खाद्य पदार्थों के मूल स्वरूप को बनाए रखने के लिए अक्सर प्राकृतिक एवं कृत्रिम रंगों का उपयोग किया जाता है। वर्तमान में भारतीय खाद्य उद्योग में कृत्रिम रंगों का अधिकाधिक उपयोग प्राकृतिक रंगों की तुलना में उनकी कम लागत एव रंगने की अधिक क्षमता के कारण बहुतायत रूप में किया जा रहा है। हाल में किए गए विभिन्न शोधों में पता चला है कि गैर अनुमति रंग मेटानिल येलो, लेड क्रोमेट, रोडामीन, सुडान-3 तथा सुडान-4 का खाद्य सामग्री में उपयोग गंभीर स्वास्थ्य परिणामों को जन्म दे रहा हैं। तैयार खाद्य सामग्री में अनुमति रंग को अधिकाधिक उपयोग पर अध्ययन यह दर्शाता है कि टेट्राजीन तथा ब्रिलियंट ब्लू के मिश्रण का सर्वाधिक उपयोग किया जा रहा है। ज्यादातर अनुमति रंग 'एजो रंजक' समूह के होते है। विभिन्न शोधों तथा अध्ययनों से पता चला है कि भोजन में इनका उपयोग मनुष्य के लिए हानिकारक है तथा विभिन्न बीमारियों जैसे सिर दर्द, एलर्जी, खुजली, त्वचा के दाग, जल प्रतिधारण नेत्र संबंधी बीमारियों को जन्म देता है। वर्तमान में बाजार से अनुमति खाद्य रंग दो या अधिक रंग के मिश्रणों (blend) के रूप में उपलब्ध है तथा इन मिश्रणों की प्रतिक्रिया व्यक्तिगत घटकों के रूप में उनकी प्रतिक्रिया से पूरी तरह से अलग होती है तथा इनके द्वारा उत्पन्न व्यक्तिगत प्रभाव से अधिक बढ़े हुए होते है।

खाद्य पदार्थों में संश्लेषित रंगों के अंधाधुंध सेवन की जाँच हेतु खाद्य सर्वेक्षण किया जाता है। खाद्य सर्वेक्षण का मुख्य उद्देश्य खाद्य पदार्थों की सतत निगरानी द्वारा उपभोक्ताओं को खाद्य पदार्थों में मिलने वाले रासायनिक एवं जैविक दुष्प्रभावों से बचाना है। देश-विदेश के विभिन्न वैज्ञानिको द्वारा किए गए खाद्य सर्वेक्षणो के अध्ययन से पता चला है कि संयुक्त राज्य अमेरिका, इटली तथा स्विटजरलैंड देशों में लोगों द्वारा इंडिगोकार्मिन, टेट्राजीन, सनसेट येलो, पोनक्यु 4R रंगों का खाद्य पदार्थों में अत्यधिक उपयोग किया जा रहा है।

भारतीय वैज्ञानिक बिस्बास एवं उनके सहयोगियों (1994) द्वारा किए गए अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि गैर-अनुमति खाद्य रंगों का उनकी अनुमेय सीमा से अधिक उपयोग विभिन्न असंगठित क्षेत्रों के छोटे कुटीर उद्योगों और घ्रुमंतू विक्रेताओ द्वारा किया जा रहा है।

भारत के उत्तर प्रदेश के 56 जिलों के 224 ग्रामीण क्षेत्रों में किए गए खाद्य सर्वेक्षण के दौरान इन क्षेत्रों के बाजारों से एकत्रित किए गए 2057 नमूनों के अध्ययन से यह पता चलता है कि खाद्य पदार्थों में 32% कृत्रिम संश्लेषित खाद्य रंगों का उपयोग किया जा रहा है जिसमें से 61% गैर-अनुमति खाद्य रंग है। कृत्रिम खाद्य रंग युक्त खाद्य पदार्थों में से 39% मिठाईयों, 85% नमकीनो, हल्दी पाउडर आदि खाद्य नमूनों में गैर-अनुमति खाद्य रंगों का उपयोग किया गया है। इसी प्रकार जोनालगड्डा एवं उनके सहयोगी साथियों द्वारा 2004 में और रॉव एवं भट्ट द्वारा 2003 में हैदराबाद एवं उसके ग्रामीण क्षेत्रों में किए गए

[1]शिप्रा जैन, एस.एस. जैन सुबोध पी.जी. कॉलेज, जयपुर, ई-मेल : फोन :
[2]शिखा जैन, डिपार्टमेंट ऑफ जूलोजी, यूनिवर्सिटी ऑफ राजस्थान, जयपुर, ई-मेल : shikha.jain1711@gmail.com, फोन :

सर्वेक्षणों से यह पता चला है कि खाद्य पदार्थों में कृत्रिम रंगों का उनकी अनुमेय सीमा से अधिक उपयोग किया जा रहा है। 545 खाद्य पदार्थों के नमूनों में से 90% में अनुमति खाद्य रंग, 2% में अनुमति एवं गैर अनुमति खाद्य रंग के मिश्रण एवं 8% में गैर अनुमति खाद्य रंगों का उपयोग किया गया है। अनुमति खाद्य रंग युक्त 90% तैयार खाद्य पदार्थों में से 73% में खाद्य अपमिश्रण अधिनियम, भारत द्वारा प्रस्तावित अनुमेय सीमा से अधिक रंगों का उपयोग किया गया है। अनुमति खाद्य रंगों में टेट्राजीन एवं सनसेट येलो तथा गैर अनुमति खाद्य रंगों में रोडामीन का सर्वाधिक उपयोग किया जा रहा है।

भारतीय त्योहारों के समय किए गए सर्वेक्षण के द्वारा रॉव एवं उनके सहयोगियो (2004) ने बताया कि टेट्राजीन तथा सनसेट येलो का उपयोग त्योहारों के दौरान अत्यधिक किया जाता है।

खाद्य पदार्थों में रंगों के उपयोग से दुष्प्रभावः

वैज्ञानिकों द्वारा खाद्य पदार्थों में रंगों के उपयोग पर किए गए शोधों में चौकाने वाले विभिन्न तथ्य सामने आए हैं। जिससे यह प्रमाणित होता है कि खाद्य रंगों से विभिन्न विषैले प्रभाव जिनमें बालों का झड़ना, रक्त में कमी, वृक्कों में हानि एवं गुणसूत्रीय परिवर्तन के साथ प्रजनन क्षमता में कमी जैसे विकार पाए गए। इसके साथ मोटापे में बढोत्तरी तथा उसी तरह के लक्षण और बीमारियाँ पाई गई, जो ज्यादा शराब का सेवन करने वाले व्यक्तियों में मिलती है।

प्रसाद और रस्तोगी (1982), गिरी एवं सहयोगी (1986, 1988) रायचौधरी एवं गिरी (1989) द्वारा चूहों के गुणसूत्रों पर किए गए अध्ययन में गुणसूत्रीय असामान्यताएँ, केन्द्रिय फ्यूजन रिंग गुणसूत्र, पीकनोंसिस, समसूत्रीय असामान्यताएँ, बहुगुणीय कोशिका में वृद्धि जैसे दुष्प्रभाव पाए गए।

सारणी 1 : विभिन्न खाद्य रंग, उत्पाद एवं दुष्प्रभाव

टेट्राजीन सनसेट येलो	मिठाइयाँ, कोल्डड्रिंक आइसक्रीम, कफ सिरप	एलर्जी, गुणसूत्रीय परिवर्तन, किडनी में क्षरण, मोटापा गुणसूत्र परिवर्तन
ब्रिलियन्ट ब्लयू	दवाइयाँ, टेबलेट्स सौंदर्य उत्पाद	मोटापा, गुणसूत्र परिवर्तन
कार्मोसीन, मैलाकाइट ग्रीन	कन्फेक्शनरी सौंफ, हरी सब्जियाँ	एनीमिया, लीवर कैंसर, कैंसर, लीवर, किडनी, मोटापा

पहले विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा किए गए विभिन्न शोध एकल संश्लेषित खाद्य रंगों पर आधारित थे, परन्तु वर्तमान में बाजार में संश्लेषित खाद्य रंग दो या दो से अधिक संश्लेषित खाद्य रंगों के मिश्रण के रूप में उपलब्ध है तथा आम आदमी/उपभोक्ता द्वारा दैनिक जीवन में इनका उपयोग खाद्य सामग्रियों में बहुतायत से किया जा रहा है। अतः लेखक द्वारा पूर्व में किए गए विभिन्न शोध अध्ययनों के प्रभाव एवं वर्तमान में उपयोग में आने वाले संश्लेषित रंगों को ध्यान में रखते हुए राजस्थान विश्व विद्यालय के प्राणीशास्त्र विभाग में चूहों पर इन संश्लेषित रंगों के मिश्रण के प्रभावों पर अध्ययन किया गया। इस शोध अध्ययन के लिए संश्लेषित खाद्य रंगों के दो मिश्रण टमाटरी लाल, एवम् ऑरेंज लाल का उपयोग किया गया। टमाटरी लाल रंग भारतीय खाद्य सर्वेक्षण अधिनियम द्वारा अनुमाति दो संश्लेषित खाद्य रंग क्रामोसिन एवं पोनक्यु 4R तथा ऑरेंज लाल, क्रामोसिन तथा सनसेट येलो खाद्य रंगों का मिश्रण है। इन संश्लेषित खाद्य रंगों पर अध्ययन एकल रूप में पूर्व में किया गया था परन्तु संयुक्त मिश्रण रूप में इनके उपयोग के प्रभावों पर किसी भी प्रकार का अध्ययन नहीं किया गया।

शोध अध्ययन के दौरान चूहों को दो समान संख्या वाले समूहों में रखा गया। प्रथम समूह के चूहों को दैनिक जीवन में इन संश्लेषित रंगों के मिश्रण युक्त उपयोग में आने वाली खाद्य सामग्री दी गई तथा दूसरे समूह के चूहों को प्राकृतिक एवं खाद्य रंग रहित खाद्य सामग्री 45 दिन की समयावधि तक दी गई। शोध अध्ययन की प्रशिक्षण समयावधि के दौरान पाया गया कि मोटापे के लक्षण चूहों में कुछ ही समय में प्रकट होने लगे। दोनों रंगों के समूह के सभी चूहों में रक्त से संबंधी विभिन्न पैरामीटर जैसे हीमोग्लोबिन में कमी हिमेटोक्रिट प्रतिशतता में कमी तथा सफेद रक्त कोशिकाओं में वृद्धि पाई गई। इसी प्रकार रक्त के सीरम के विभिन्न पैरामीटर एलकालाइन फास्फेटेज प्रोटीन में वृद्धि एवम् इसके अतिरिक्त विपरीत सीरम कोलेस्टेरॉल, ग्लूकोज एवं ट्राइग्लिसराइड में कमी पाई गई। यकृत के औतिकी अध्ययन में पाया गया कि हीपेटोसाइट की रेडियल व्यवस्था प्रभावित हो गई पीकानोसिस एवं केरियालाइसिस प्रभाव दिखाई दिए। वृक्को के औतिकी अध्ययन के दौरान भी कई दुष्प्रभाव दिखाई दिए। इन रंगों के मिश्रण का चूहों के प्रजनन अंगों पर भी दुष्प्रभाव दिखाई दिए। इसके अतिरिक्त गुणसूत्रों पर किए गए अध्ययन में पाया गया कि इनके उपयोग के कारण गुणसूत्रों की संख्या में कमी हुई है एवं विभिन्न असमानताएँ जैसे सैंट्रिक रिंग, गुणसूत्रीय खंड, द्विकेन्द्रीय गुणसूत्र, गुणसूत्रीय खण्डन, इत्यादि पाए गए है।

अध्ययनों के आधार पर यह स्पष्ट है कि खाद्य उद्योगों द्वारा खाद्य पदार्थों में अनुमानित सीमा से अधिक खाद्य रंगों का एकल या उनके मिश्रण के रूप में उपयोग किया जाना स्वाभाविक रूप से हमारे स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव डाल रहा है। अतः यह आवश्यक है कि भारतीय सरकार द्वारा खाद्य रंगों की अनुमानित सीमा का पुनः निरीक्षण किया जाए तथा जन स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए इन खाद्य रंगों का उपयोग कम किया जाए विशेष रूप से मिश्रणों के रूप में। इसके अतिरिक्त उपभोक्ता द्वारा खाद्य पदार्थों की खरीद के समय उस सामग्री की सारणी को भी ध्यानपूर्वक देखा जाए।

समाधान : कृत्रिम रंगों के स्थान पर समाधान के रूप में प्राकृतिक रंग जो पूर्ण रूप से सुरक्षित एवं शुद्ध हैं, का उपयोग किया जाना चाहिए। इसके लिए इन प्राकृतिक खाद्य रंगों का निर्माण करने के लिए प्रौद्योगिकी, विकास एवं अनुसंधान संगठनों को बढ़ावा देना चाहिए।

संदर्भ

1. पीएफएए, खाद्य अपमिश्रण अधिनियम, नियम का निवारण, एड 16. ईस्ट इंडियन बुक कम्पनी, 1954।
2. पीएफएए, भारत, 1954 खाद्य अपमिश्रण अधिनियम के नियमों की रोकथाम, लखनऊ, ईस्ट इंडियन बुक कम्नी, 2003
3. शर्मा ए., गोयल आर.पी. चक्रवर्ती जी. आर शर्मा एस. आमतौर पर इस्तेमाल होने वाले अनुमति खाद्य रंग मिश्रण चौकलेट ब्राउन का स्विस एल्बिनो चूहों पर रक्तविषाक्त प्रभाव। एशियन जर्नल ऑफ एक्सपेरीमेंटल साइंस, 2005, 19:93-103
4. चक्रवर्ती जी., गोयल आर.पी, शर्मा एस. और शर्मा. ए., गैर अनुमति खाद्य रंग मैलाकाइट ग्रीन द्वारा स्विस एल्बीनो चूहों में रक्त संबंधी परिवर्तन। इंडियन जर्नल ऑफ एनवायरॉनमेंटल साइंस। (2005) : 9 (2) : 113-117
5. शर्मा एस., गोयल आर.पी. चक्रवर्ती जी. और शर्मा ए., ऑरेंज, लाल अनुमति खाद्य रंगों का मिश्रण द्वारा स्विस एल्बिनो चूहों (मस मस्क्यूलस) में रक्त संबंधी परिवर्तन। बूलेटिन ऑफ प्योर एंड एप्लाइड साइंस। (2004) : 24 : 99-103
6. बिस्वास जी., सरकार एस. और चटर्जी टी.के. (1994) : कलकत्ता और आसपास के क्षेत्रों में खाद्य विपणन उत्पादों में कृत्रिम रंगों पर निगरानी। जर्नल ऑफ फूड साइंस टेक्नोलोजी।
7. जोनालागाड्डा पी.आर., राव पी., भट्ट आर.वी. और नायडू ए.एन. (2004) : प्रकार, सीमा और गैर औद्योगिक क्षेत्र में तैयार खाद्य पदार्थो, खाद्य रंगों का, हैदाबाद, भारत से एक मामले का अध्ययन। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ फूड साइंस टेक्नोलोजी। 39:125
8. गिरी ए., तालुकदार और शर्मा जी.ए. (1986) : चूहों पर मेटानिल येलो एवं नाइट्रेट द्वारा प्रेरित एकल एवं संयोजन में सिस्टर क्रोमोटिड के एक्सचेंज का अध्ययन। कैंसर लैटर। 31:299-303
9. गिरी ए. मुखर्जी ए. तालुकदार और शर्मा जी.ए. (1988) : एक खाद्य रंग ओरेंज जी द्वारा प्रभावित चूहों पर इन-वीवो साइटोजेनेटिक अध्ययन। टोक्सीकोलोजी लैटर, 44:253-261
10. प्रसाद ओ और रस्तोगी ओ.पी. (1982): स्विस ऐल्बिनो चूहों में ओरेंज द्वितीय द्वारा प्रेरित साइटोजेनेटिकल परिवर्तन। सेल एण्ड मोलेक्यूलर लाइफ साइंस।
11. प्रसाद ओ. और रस्तोगी ओ.पी. (1986): एल्बिनों चूहों में एक आम खाद्य रंग मेटानिल येलो द्वारा प्रेरित औतिकी परिवर्तन। प्रोसेंडिंग ऑफ नेशनल एकेडमी ऑफ साइंसेज। 56:118-123
12. प्रसाद ओ. और राय जी. (1988): एल्बिनों चूहों में सेकरिन द्वारा प्रेरित रक्त संबंधी परिवर्तन। प्रोसेडिंग, नेशनल ऐकेडमी ऑफ साइंस। 53, 1-9
13. राव पी., और भट्ट आर.वी. (2003): हैदराबाद के शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों से प्राप्त खाद्य पदार्थो में कृत्रिम भोजन रंगों के उपयोग पर एक तुलनात्मक अध्ययन। न्यूट्रिशन एण्ड फूड साइंस। 33:230-234
14. राव पी., भट्ट आर.वी. सुदर्शन आर.वी., कृष्णा टी.पी. और नायडू एन. (2004) : हैदराबाद, भारत में किसी चयनित आबादी का कृत्रिम भोजन रंग के लिए मूल्यांकन। एडिट. फूड कोन्टेम 21:415-421
15. राव पी. भट्ट आर.वी., सुदर्शन आर.वी. और कृष्णा टी.पी. (2005) : संश्लेषित खाद्य रंगों की हैदराबाद, भारत में त्योहारों के दौरान खपतः ब्रिटिश फूड जर्नल। 107 : 276-284
16. रायचौधरी ए. और गिरी ए.के. (1989): एल्यिम सीपा के गुणसूत्रों पर कुछ खाद्य रंजक के प्रभाव। म्यूटेशन रिसर्च। 223:313-319

विश्व हिन्दी न्यास

WORLD HINDI FOUNDATION, INC.

A Tax-Exempt Charitable & Educational Foundation (ID31-1679275)

विश्व हिन्दी न्यास, 54, पैरी हिल रोड, ऑसवीगो (न्यूयॉर्क)-13126 यू.एस.ए.

Website : www.worldhindifoundation.org

न्यास का लक्ष्य

1. विश्व में हिन्दी का बोध तथा प्रयोग

न्यास का उद्देश्य

1- सांस्कृतिक केन्द्रों तथा विभिन्न शिक्षा संस्थानें में हिन्दी शिक्षण को प्रोत्साहन, तथा हिन्दी पीठों की स्थापना में योगदान।

2- हिन्दी को संयुक्तराष्ट्र की एक अधिकृत भाषा बनाने की दिशा में प्रयत्न।

3- भारतीय संस्कृति में निहित मूल्यों का प्रचार-प्रसार।

विज्ञान प्रकाश

World Hindi Foundation Ini. (ID-31-1679275)
54, Perry Hill Road, Oswego, NY 13126. USA

एक प्रति का मूल्य	व्यक्यिों के लिए	50.00 रू. (भारत में)	
	संस्थाओं के लिए	60.00 रू. (भारत में)	
वार्षिक मूल्य	व्यक्यिों के लिए	180.00 रू. (भारत में)	USA 25.00 (विदेश में)
	संस्थाओं के लिए	200.00 रू. (भारत में)	USA 25.00 (विदेश में)

विश्व-हिन्दी-न्यास के अन्य प्रकाशन

हिन्दी जगत

मुख्य सम्पादक-कैलाश शर्मा
सम्पादक
प्रो. सुरेश ऋतुपर्ण

न्यास समाचार-त्रैमासिक

सम्पादक-डॉ. श्याम शुक्ला
विश्व हिन्दी न्यास, 54, पैरी हिल रोड,
ऑसवीगो (न्यूयॉर्क)- 13126 यू.एस.ए.

बाल हिन्दी जगत

सम्पादिका-अंचला सोब्रिन
अंचला सोब्रिन, 20 प्रेजीडेंसियल वे,
होपवेल जंक्शन न्यूयॉर्क 12533
फोन : (845) 226-2542

लोक-विज्ञान तथा साहित्य-साधना

सं. राम चौधरी
प्रकाशक : विश्व हिन्दी न्यास, 54, पैरी हिल रोड,
ऑसवीगो (न्यूयार्क)-13126 यू.एस.ए.
वितरक : हिन्दी बुक सेण्टर,
4/5-बी, आसफ अली रोड, नई दिल्ली, भारत